उलझे बच्चे

लेखक
प्रो० जगदीश सिंह

प्रकाशक
नैशनल पब्लिशिंग हाउस
नई सड़क, देहली

मूल्य १।।)

प्रस्तावना

कुलदीप बहुत लड़ाका है

गुरदीप खाता-पीता दुर्बल होता जा रहा है

यशवन्त विद्याध्ययन में बहुत पिछड़ा हुआ है

सत्येन्द्र मोहन इतना बड़ा होने पर भी बच्चों की भांति रूठ जाता है

सतीश अत्यधिक गन्दा रहता है

गुरदीपकौर बारह वर्ष की हो गई फिर भी रात को बिस्तर में पेशाब कर देती है

मोहन को यदि अध्यापक कक्षा में काम के सम्बन्ध में पूछे तो वह गुमसुम हो जाता है

सुरिन्द्र की जिह्वा में अटकाव है

प्रकाश नौ वर्ष का हो गया है, परन्तु अब भी अंगूठा चूसता रहता है

गुरदीप बायें हाथ से लिखता है

प्रमिला गन्दी २ बातें करती है

अमरा और सुदर्शन को बुरी आदतें पड़ गई हैं

इन्दरजीत बारह वर्ष का हो गया है परन्तु उसकी आदतें और उसकी बुद्धि अभी पांच वर्ष के बच्चे से भी कम है

अकरम विद्याध्ययन में कोई उन्नति नहीं करता

बसन्त बहुत गन्दा और पागल सा है

माता-पिता और अध्यापक इन पुस्तकों को अवश्य पढ़ें

'reliminary :

1. Marie Stopes, *Radiant Motherhood.*
2. Marie Stopes, *Your Baby's First Year.*
3. F. Truby King, *Feeding and Care of Baby.*
4. Mary Truby King, *Mothercraft.*
5. Susan Isaacs, *Nursery Years,*

\dvanced :

1. *"On the Bringing up of Children by Five Psychoanalysts"* (Kitabistan).
2. Van de Velde, *Ideal Birth.*

Technical :

1. Strain, *Being Born.*
2. A. W. Ellis, *How You Began.*

General :

1. A. S. Neill, *The Problem Child.*
2. „ „ *The Problem Parent*
3. „ „ *The Problem Teacher.*
4. Ethel Mannin, *Commonsense and the Child.*
5. *The Parents Magazine, Chicago.*

कुलदीप अपने वंश में इकलौता बेटा है। इसलिये वह अकेला ही सब घर वालों के अमित लाड़-प्यार का पात्र है। कितने ही घरों पर उसका राज्य है। उसके मुंह से बात निकलने भर की देर है कि वह पूरी हो जाती है। वह कोई भी वस्तु मांग ले, उसी समय उस वस्तु का उसके लिये प्रबन्ध कर दिया जाता है। उसके मुंह से निकला हुआ शब्द पत्थर की लकीर है। उसके लिये घर में, अड़ोस-पड़ोस में और सारे वंश में स्वच्छन्दता, स्वतन्त्रता और मनमानी का वातावरण है। ऐसे वातावरण में पल कर कुलदीप जब तीन चार साल का हुआ तो उसकी मां उसकी नित नई शरारतों से तंग आकर कभी-कभी उसे झिड़कने लगी। वह कभी-कभी उसे घर से बाहर निकाल देती। बाहर आकर कुलदीप गली के अन्य बच्चों के साथ खेलने लग जाता। गली के सारे बच्चे भी कुलदीप के [illegible] ते। जो बालक उसकी आज्ञा को न मानता — खेलने न देता।

तो वह स्कूल जाने लगा। [illegible]शाली व्यक्तियों में से थे, कुछ न कहते थे, बल्कि

र से और चुमकार-पुचकार कर उसे पढ़ाते थे। कुलदीप
म-बुद्धि, इसलिये थोड़ा-सा परिश्रम करके वह अपने
यों से पीछे न रहता।

ज्यों कुलदीप बड़ा होता गया, त्यों-त्यों उसकी शरारतें
गईं। वह जब तक घर में रहता, एक बवंडर खड़ा किये
माँ का लाडला था, परन्तु माँ को सब से अधिक तंग
। कभी-कभी क्रोध में आकर माँ को पीट भी डालता था।
माँ बेचारी उसे घर से बाहर रखना अधिक पसन्द करती
न वह घर में रहे और न ऊधम मचाए।

दीप के पिता सारा दिन घर से बाहर रहते थे। वे अपने
न्धों में और सार्वजनिक कार्यों में अपना अधिकांश समय
। वे अपने लड़के को बहुत प्यार करते थे और उन्हें इस
दृढ़ विश्वास था कि कुलदीप एक दिन देश का दीपक

दीप और बड़ा होकर और भी अधिक शरारती हो गया।
उससे बहुत अधिक तंग होने लगी। उस से बिल्कुल तंग
पिता ने उसे किसी दूसरे नगर में एक अच्छे स्कूल के
में प्रविष्ट करा दिया। परन्तु उसकी शरारतें वहाँ भी कम
दूसरे छात्र उससे तंग आने लगे। वह शिक्षा की ओर
ध्यान नहीं देता था और सारा दिन खेल-कूद और ऊधम
व्यतीत कर देता था।

माता-पिता को कभी पत्र तक न लिखता। पन्द्रह-बीस

स्कूल के हैडमास्टर साहब से पूछते कि कुलदीप अपना कुशल-समाचार क्यों नहीं देता। हैडमास्टर साहब उसे बुलाकर समझाते तो वह हर बार यह प्रतिज्ञा करता कि भविष्य में वह नियम पूर्वक पत्र लिखा करेगा। परन्तु हैडमास्टर साहब के कमरे से बाहर निकलते ही वह अपनी प्रतिज्ञा का ध्यान छोड़ देता। जब कुछ दिनों के पश्चात् फिर उसके पिता की चिट्ठी हैडमास्टर साहब के नाम आती और हैडमास्टर साहब उसे बुलाकर पूछते तो वह सदा एक ही उत्तर दिया करता—"मुझे याद नहीं रहा।"

जब कुलदीप नवीं कक्षा में हुआ तो उसने साइंस और फ़िज़ियॉलॉजी पढ़ने से इन्कार कर दिया। कहने लगा, ये विषय मुझे नीरस लगते हैं; इन्हें पढ़ने को मेरा जी नहीं चाहता। उसके पिता की यह बड़ी गहरी अभिलाषा थी कि वह बड़ा होकर डाक्टर बने। ज्योतिषी ने भी यही बताया था कि कुलदीप डाक्टर बनेगा। उसके पिता को बड़ी हैरानी हो रही थी कि कुलदीप साइंस और फ़िज़ियॉलॉजी क्यों नहीं पढ़ता। यदि वह इन विषयों का अध्ययन नहीं करेगा तो डाक्टर कैसे बनेगा? पिता कुलदीप के अध्यापकों को दोषी ठहराने लगा। यदि कुलदीप घर वालों को पत्र नहीं लिखता था तो उसकी इस लापरवाही और सुस्ती के लिये भी पिता उसके अध्यापकों को जिम्मेदार ठहराता था।

कुलदीप अपने वस्त्रों और शरीर की स्वच्छता के प्रति भी उतना ही असावधान था। इतना बड़ा हो जाने पर भी वह अपनी

वस्तुएं स्वयं सम्भाल कर नहीं रख सकता था। पगड़ी उठाई और
सिर पर उल्ट-पटांग ढंग से लपेट ली। किसी समय पगड़ी न
मिली तो न सही बिना पगड़ी बांधे ही चल दिया। बाल यदि
बिखर गये हैं तो बिखरे ही रहते। एक पाँव में जूता है तो दूसरा
नंगा है। बूट कहीं भी उतार डाले और उन्हें वहीं पड़ा रहने
दिया। खेलने गया तो कोट खेल के मैदान में ही छोड़ आया।
कपड़ों समेत ही नंगी धरती पर लेट जाता जिससे सारे कपड़े
खराब हो जाते।

बाल्यावस्था में कुलदीप की स्वच्छता और स्वच्छेच्छा-चारिता
की बातें साधारण सी थीं। सारे कुटुम्ब का इकलौता नौनिहाल
होने के कारण सब उससे लाड़-प्यार करते थे और उसकी मन-
मानियों को सहर्ष सहन करते थे। वे उसकी प्रत्येक उचित अथवा
अनुचित बात को मान लेते थे। परन्तु बड़े होने पर यही बातें
उसकी उन्नति के मार्ग में रोड़ा बन गईं। माता-पिता ने उसे घर
से दूर रखकर उसका सुधार करना चाहा, परन्तु उसमें वहाँ भी
कोई सुधार नहीं हुआ। जब बाल्यावस्था में माता ने उसे अपने शरीर
वस्त्रों तथा अन्य वस्तुओं को सम्भालने का अभ्यास नहीं
कराया (क्योंकि वह अपने लाडले का सारा काम स्वयं अपने
हाथों से करती थी) तो फिर स्कूल में जाकर वह इतनी जल्दी
अपना काम अपने हाथों से करना किस तरह सीख सकता था?
बाल्यावस्था में बनी हुई आदतें साल-छः महीने में नहीं बदल
सकतीं। हाँ, यदि अच्छा वातावरण मिल जाय तो धीरे-धीरे कुछ
समय के पश्चात्, उन आदतों में सुधार हो सकता है।

: २ :

हंसराज, सत्या, कैलाश और ऊषा—चारों भाई-बहिनें हैं। हंसराज की आयु लगभग १४ वर्ष की है और वह नवीं श्रेणी में पढ़ रहा है। सत्या बारह वर्ष की है और वह अभी चौथी श्रेणी में पढ़ रही है। कैलाश की आयु दस वर्ष है और वह छठी श्रेणी में पढ़ रहा है। आठ वर्ष की ऊषा तीसरी श्रेणी में है। हंसराज अत्यन्त समझदार और तीक्ष्ण-बुद्धि लड़का है। वह अपना प्रत्येक कार्य पूरी सावधानी और जिम्मेदारी के साथ करता है। सत्या शिक्षा-क्षेत्र में बहुत पिछड़ी हुई है। हिसाब में उसे लेशमात्र भी रुचि नहीं। अंग्रेज़ी और हिन्दी में वह थोड़ी बहुत रुचि रखती है परन्तु इन विषयों में भी वह अपनी कक्षा के साथ नहीं चल सकती। प्रत्येक परीक्षा में वह असफल हो जाती है। कैलाश वैसे तो बहुत अच्छा लड़का है, परन्तु पढ़ने-लिखने में वह भी अधिक तीव्र नहीं है। परीक्षाओं में वह बड़ी कठिनता से सफल होता है। यही नहीं, वरन् किसी न किसी विषय में वह हर साल फ़ेल हो जाता है। छोटी बहिन ऊषा पढ़ाई के क्षेत्र में अपने सब भाई बहिनों से अधिक होशियार है।

लाला किशोरी लाल स्कूल के मुख्याध्यापक को एक लम्बी-चौड़ी शिकायती चिट्ठी लिखते हैं। छुट्टियाँ समाप्त होने पर दोनों लड़कों को छात्रावास से हटा लिया जाता है और शहर में एक मकान किराए पर लेकर उनकी माँ को उनके साथ भेज दिया जाता है ताकि वह स्वयं उनकी देख-भाल कर सके। सत्या और ऊषा भी अपनी माँ के साथ शहर के मकान में चली आती हैं। उन्हें भी स्कूल में दाखिल करा दिया जाता है। कैलाश घर में बड़ा प्रसन्न रहता है, परन्तु सत्या यहां भी शिक्षा की ओर से इतनी ही उदासीन है।

सारे परिवार के शहर में चले आने के कारण लाला किशोरी लाल का मन गाँव में नहीं लगता। इधर, शहर में उनकी स्त्री को बाजार से खाने-पीने की सामग्री तथा अन्य सामान मंगवाने में बड़ी असुविधा रहती है। चारों बच्चे स्कूल चले जाते हैं। घर आकर भी स्कूल का काम करने में लगे रहते हैं। उनकी माँ दाल, चावल, नमक, लकड़ी और अनाज आदि मंगाने के झंझट से परेशान रहती है। गर्मियों की लम्बी छुट्टियां होने पर सारे बच्चे और उनकी माँ फिर गाँव वापिस आ जाते हैं। हंसराज प्रत्येक परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाता है, परन्तु लाला जी की हार्दिक इच्छा यह है कि वह प्रथम डिविजन में सफल हुआ करे। कैलाश घर में प्रसन्न तो रहता है परन्तु वह पढ़ने में कोई प्रगति नहीं करता। सत्या जैसी पहले थी वैसी ही अब भी है। ऊषा यहां भी अपनी कक्षा में प्रथम रहती है। गांव में वह हिन्दी पढ़ती थी यहां उर्दू

इन चारों बच्चों के माता-पिता की बड़ी तीव्र अभिलाषा है कि
ये सब बहुत होशियार और योग्य बन जाएँ। लाला किशोरीलाल
इसी प्रयत्न में लगे रहते हैं कि उनके बच्चे किसी न किसी तरह
अपनी कमी पूरी करके अपनी कक्षा के साथ चल निकलें और हो
सके तो उनसे आगे निकल जाएँ। परन्तु उनकी यह अभिलाषा
कभी पूरी नहीं होती। बच्चों के लिये वे ट्यूशन लगाये ही र...
हैं। कभी एक स्कूल में उन्हें दाखिल कराते हैं और कभी दू...
में। परन्तु इनको सन्तोष नहीं होता। अन्ततः वे अपने दो...
लड़कों को शहर के एक अच्छे स्कूल में भेज देते हैं और उसके
छात्रावास में उन्हें प्रविष्ट करा देते हैं। वे स्कूल के मुख्या-
...यापक को विस्तारपूर्वक हिदायत देते हैं कि उनके बच्चों को
...से रखा जाय और किस प्रकार बच्चों की शिक्षा
...सम्बन्ध में उनकी अभिलाषाओं को कार्यरूप में परिणत
...ा जावे। तीन महीने तक उनके दोनों लड़के छात्रावास ...
...हैं। जब वे छुट्टियों में घर आते हैं तो बच्चों की परीक्षाओं
...रिणाम की रिपोर्ट भी लाला जी के पास पहुँचती है। रिपोर्ट
...र लाला किशोरीलाल बहुत निराश हो जाते हैं। दोनों
...ने तीन महीने में कुछ भी उन्नति नहीं की। वैसे के वैसे
...बेचारा उदास सा होकर घर आया है और कहता है कि
...अन्य लड़के उससे छेड़-छाड़ करते हैं। उसके कुछ बाल
...गए। दोनों बच्चों का शरीर भी कुछ दुर्बल हो

लाड-प्यार प्रारम्भ ही से उसे पूरा २ मिलता रहा है। परन्तु छात्रावास में उसे अपना सब कार्य स्वयं करना पड़ता है। उसे घर पर इन कामों का लेश-मात्र भी अभ्यास और प्रशिक्षण प्राप्त नहीं हुआ। छात्रावास में भोजन समय पर करो, नहीं तो कोई पूछता ही नहीं। घर पर मां थाली लिये २ उसके पीछे २ घूमती है। नहाने के लिये उसे हाथ से पकड़ कर स्नान-गृह में भेजती है। स्वयं कपड़े पहना कर उसे तैयार करती है। छात्रावास में कैलाश सुस्त और आलसी बना रहता है। निकर नीचे को खिसकी रहती है। कपड़े मैले रहते हैं। लाडला होने के कारण घर भर पर उसका शासन था। उसकी हर बात मानी जाती थी। परन्तु छात्रावास में सब बच्चे समान होते हैं; वहां कोई 'लाडला बेटा' नहीं होता। इसलिये कैलाश को छात्रावास में कष्ट होना अवश्यम्भावी था। अपने आप को संभालने का ढङ्ग उसे धीरे २ ही आ सकता था।

सत्या बेचारी दो ही वर्ष की थी कि कैलाश ने उसके स्थान पर अपना आधिपत्य जमा लिया। वह बेचारी गली में अकेली खेलती फिरती रहती थी। मां का सारा ध्यान अपने लाडले बेटे कैलाश में केन्द्रित रहता था। सत्या की ओर वह लेश-मात्र भी ध्यान नहीं दे पाती थी। वह इसी अवहेलना और तिरस्कार के वातावरण में पलती रही। जब वह छः वर्ष की थी तो उसे गली के ही एक रद्दी से स्कूल में दाखिल करा दिया गया। वह कुछ पढ़ती भी है या नहीं—इस बात की ओर घर का कोई व्यक्ति ध्यान

लाड-प्यार प्रारम्भ ही से उसे पूरा २ मिलता रहा है। परन्तु छात्रावास में उसे अपना सब कार्य स्वयं करना पड़ता है। उसे घर पर इन कामों का लेश-मात्र भी अभ्यास और प्रशिक्षण प्राप्त नहीं हुआ। छात्रावास में भोजन समय पर करो, नहीं तो कोई पूछता ही नहीं। घर पर मां थाली लिये २ उसके पीछे २ घूमती है। नहाने के लिये उसे हाथ से पकड़ कर स्नान-गृह में भेजती है। स्वयं कपड़े पहना कर उसे तैयार करती है। छात्रावास में कैलाश सुस्त और आलसी बना रहता है। निक्कर नीचे को खिसकी रहती है। कपड़े मैले रहते हैं। लाडला होने के कारण घर भर पर उसका शासन था। उसकी हर बात मानी जाती थी। परन्तु छात्रावास में सब बच्चे समान होते हैं; वहां कोई 'लाडला बेटा' नहीं होता। इसलिये कैलाश को छात्रावास में कष्ट होना अवश्यम्भावी था। अपने आप को संभालने का ढङ्ग उसे धीरे २ ही आ सकता था।

सत्या बेचारी दो ही वर्ष की थी कि कैलाश ने उसके स्थान पर अपना आधिपत्य जमा लिया। वह बेचारी गली में अकेली खेलती फिरती रहती थी। मां का सारा ध्यान अपने लाडले बेटे कैलाश में केन्द्रित रहता था। सत्या की ओर वह लेश-मात्र भी ध्यान नहीं दे पाती थी। वह इसी अवहेलना और तिरस्कार के वातावरण में पलती रही। जब वह छः वर्ष की थी तो उसे गली के ही एक रद्दी से स्कूल में दाखिल करा दिया गया। वह कुछ पढ़ती भी है या नहीं—इस बात की ओर घर का कोई व्यक्ति ध्यान

नहीं देता था। हँसराज को खर्च करने के लिये हर रोज एक पैसा मिलता था। परन्तु सत्या को दूसरे तीसरे दिन रो-पीट कर एक पैसा मिलता था। जब कैलाश पाँच वर्ष का हुआ तो उसे भी हँसराज वाले स्कूल में प्रविष्ट करा दिया गया। उसके प्रवेश के दिन लड्डू बाँटे गये। उसे खर्च करने के लिये दो पैसे रोज मिलते थे। जब हँसराज हठ करता तो उसे भी दो पैसे मिल जाते परन्तु सत्या को हठ करने पर भी एक पैसे से अधिक न मिलता और कभी २ तो उसे यह कहकर कोरा टाल दिया जाता था। "इस समय खरीज नहीं है।"

इन परिस्थितियों में तीनों ने पढ़ना प्रारम्भ किया था। बेचारी सत्या की कुछ तो नैसर्गिक रुचि विद्याध्ययन में कम थी, और उसे स्कूल भी निकम्मे मिले। फिर उसकी परवाह भी कोई नहीं करता था। सिलाई और कढ़ाई के कामों में उसकी रुचि अधिक थी। छोटी आयु में अपनी सहेलियों की देखादेखी वह सिला और कढ़ाई के काम करती रही। जब बड़ी होने पर वह विद्याध्ययन के क्षेत्र में कैलाश से पीछे रह गई तो उसे डाँट-डपट भी मिलने लगी। अब उसका सिलाई और कढ़ाई का काम भी बन्द हो गया।

× × × ×

... आयु में बच्चों के प्रति उदासीनता अथवा अत्याचार और ... के साथ अनर्थ कर डालते हैं। जब वे बड़े हो जाते हैं तो ... से अधिक चिन्ता करने लगते हैं। कहीं

उन्हें एक स्कूल में दाखिल कराते हैं और कभी दूसरे में। कभी घर पर पढ़ाने के लिये एक अध्यापक को लगाते हैं और कभी दूसरे को। परन्तु संतोष किसी तरह नहीं होता।

दस-बारह वर्ष की असावधानी और उदासीनता के पश्चात् बच्चों से यह आशा नहीं रखनी चाहिये कि वे साल-छः महीने में कोई आश्चर्य-जनक परिणाम दिखला सकेंगे। घर पर बच्चों की प्रगति के संबंध में हर घड़ी अपनी चिन्ता को प्रकट करते रहना बच्चों के लिये बहुत हानिकारक होता है। प्रत्येक बच्चे का एक दूसरे के साथ मुक़ाबला करते रहने से और दूसरों की अपेक्षा उन में क्या २ कमी और खराबी है इसका चर्चा करते रहने से बच्चों के व्यक्तित्व पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है।

: ३ :

यशवन्त की आयु बारह वर्ष की होने को आई है, परन्तु वह अभी तक छोटे बालकों की भाँति लड़ता-झगड़ता और हठ करता है। यदि उसकी छोटी से छोटी और साधारण से साधारण बात भी न मानी जाए तो वह धरती पर लेट कर रोना शुरू कर देता है। बसन्त के दिनों में पाँच-दस रुपये पतंग-बाजी पर व्यय कर देता है। पाँच-छः आने छबड़ी वालों की भेंट कर देना तो उसका नित्य प्रति का काम है। हठ करके सप्ताह में दो तीन बार वह सिनेमा भी देख आता है।

पढ़ने में वह किंचित्-मात्र भी ध्यान नहीं देता और किसी भी श्रेणी में सिफारिश के बिना उत्तीर्ण नहीं होता। घर पर वह अपनी पुस्तकों को छूता भी नहीं, इसलिये स्कूल का काम करके कभी नहीं ले जाता। वहाँ वह नित्य प्रति अपने अध्यापकों से झाड़ खाता है, या कमरे से बाहर निकाल दिया जाता है। कमरे से बाहर निकल कर वह छबड़ी वालों के पास जा बैठता है। परीक्षा से दो तीन महीने पहले उसके पिता उसके स्कूल के अध्यापकों में से किसी एक को ट्यूशन रख देते हैं और वह

अध्यापक उसे परीक्षा से पहले ही प्रश्न-पत्र बता देता है। या फिर वह हैड-मास्टर से सिफ़ारिश करके उसे अगली कक्षा में चढ़वा देता है।

सुस्त भी वह एक नम्बर का है। किसी खेल में भी तो वह भाग नहीं लेता। सारा दिन चरते रहने और बैठे रहने के कारण उसका शरीर फूल कर कुप्पा हो गया है। वह इतना अधिक मोटा हो गया है कि कारटून सा दिखाई देने लगा है उसके लिये अब उठना बैठना भी कठिन हो गया है, जिसका परिणाम यह हुआ है कि उसमें स्फूर्ति और उद्यम नाम को भी नहीं रहा।

× × ×

यशवन्त माता-पिता की इकलौती सन्तान है। और फिर है भी लड़का! माँ स्थायी रोगिनी है, इसलिये उसके यहां कोई और सन्तान हुई ही नहीं। परिणाम यह है कि यशवन्त अपने माता-पिता की समस्त अभिलाषाओं और सारे स्नेह का केन्द्र बना रहा है। जब वह छोटा था तो उसकी माता कई वर्षों तक बहुत बीमार रही। उन दिनों वह या तो ननिहाल में भेज दिया जाता था या उसे उसके दादा-दादी सम्भालते थे। ये लोग उसकी हर बात मानने के लिये विवश रहे हैं। दादी तो विशेष रूप से हर घड़ी उसके लाड-प्यार में लगी रही है। उसके पिता प्रातः काल ही दफ्तर में चले जाते हैं और शाम को वापिस आते हैं।

जब उसकी माता लम्बी बीमारी से निवृत्त होकर घर का काम-काज संभालने के योग्य हुई तो उस समय यशवन्त आठ वर्ष

: ३ :

यशवन्त की आयु बारह वर्ष की होने को आई है, परन्तु अभी तक छोटे बालकों की भाँति लड़ता-झगड़ता और हठ करता है। यदि उसकी छोटी से छोटी और साधारण से साधारण बात भी न मानी जाए तो वह धरती पर लेट कर रोना शुरू कर देता है। बसन्त के दिनों में पाँच-दस रुपये पतंग-बाजी पर व्यय कर देता है। पाँच-छः आने छबड़ी वालों को भेंट कर देना तो उसका नित्य प्रति का काम है। हठ करके सप्ताह में दो तीन बार वह सिनेमा भी देख आता है।

पढ़ने में वह किंचित्-मात्र भी ध्यान नहीं देता और किसी भी श्रेणी में सिफारिश के बिना उत्तीर्ण नहीं होता। घर पर वह अपनी पुस्तकों को छूता भी नहीं, इसलिये स्कूल का काम करके कभी नहीं ले जाता। वहां वह नित्य प्रति अपने अध्यापकों से झिड़क खाता है, या कमरे से बाहर निकाल दिया जाता है। कमरे से बाहर निकल कर वह छबड़ी वालों के पास जा बैठता है।

दो तीन महीने पहले उसके पिता उसके स्कूल के एक की ट्यूशन रख देते हैं और वह

अध्यापक उसे परीक्षा से पहले ही प्रश्न-पत्र बता देता है। या फिर वह हैड-मास्टर से सिफ़ारिश करके उसे अगली कक्षा में चढ़वा देता है।

सुस्त भी वह एक नम्बर का है। किसी खेल में भी तो वह भाग नहीं लेता। सारा दिन चरते रहने और बैठे रहने के कारण उसका शरीर फूल कर कुप्पा हो गया है। वह इतना अधिक मोटा हो गया है कि कारटून सा दिखाई देने लगा है उसके लिये अब उठना बैठना भी कठिन हो गया है, जिसका परिणाम यह हुआ है कि उसमें स्फूर्ति और उद्यम नाम को भी नहीं रहा।

× × ×

यशवन्त माता-पिता की इकलौती सन्तान है। और फिर है भी लड़का। माँ स्थायी रोगिनी है, इसलिये उसके यहां कोई और सन्तान हुई ही नहीं। परिणाम यह है कि यशवन्त अपने माता-पिता की समस्त अभिलाषाओं और सारे स्नेह का केन्द्र बना रहा है। जब वह छोटा था तो उसकी माता कई वर्षों तक बहुत बीमार रही। उन दिनों वह या तो ननिहाल में भेज दिया जाता था या उसे उसके दादा-दादी सम्भालते थे। ये लोग उसकी हर बात मानने के लिये विवश रहे हैं। दादी तो विशेष रूप से हर घड़ी उसके लाड़-प्यार में लगी रही है। उसके पिता प्रातः काल ही दफ्तर में चले जाते हैं और शाम को वापिस आते हैं।

जब उसकी माता लम्बी बीमारी से निवृत्त होकर घर का काम-काज संभालने के योग्य हुई तो उस समय यशवन्त आठ वर्ष

यशवन्त की आयु बारह वर्ष की होने को आई है, परन्तु व
अभी तक छोटे बालकों की भाँति लड़ता-झगड़ता और हठ करत
है। यदि उसकी छोटी से छोटी और साधारण से साधारण बात
भी न मानी जाए तो वह धरती पर लेट कर रोना शुरू कर देत
है। बसन्त के दिनों में पाँच-दस रुपये पतंग-बाज़ी पर व्यय कर
देता है। पाँच-छः आने छबड़ी वालों की भेंट कर देना तो उसका
नित्य प्रति का काम है। हठ करके सप्ताह में दो तीन बार वह
सिनेमा भी देख आता है।

पढ़ने में वह किंचित्-मात्र भी ध्यान नहीं देता और कि
भी श्रेणी में सिफ़ारिश के बिना उत्तीर्ण नहीं होता। घर पर
अपनी पुस्तकों को छूता भी नहीं, इसलिये स्कूल का काम कर
कभी नहीं ले जाता। वहां वह नित्य प्रति अपने अध्यापकों
झाड़ खाता है, या कमरे से बाहर निकाल दिया जाता है। कमरे
से बाहर निकल कर वह छबड़ी वालों के पास जा बैठता है।
परीक्षा से दो तीन महीने पहले उसके पिता उसके स्कूल के
अध्यापकों में से किसी एक की ट्यूशन रख देते हैं और वह

अध्यापक उसे परीक्षा से पहले ही प्रश्न-पत्र बता देता है। या फिर वह हैड-मास्टर से सिफ़ारिश करके उसे अगली कक्षा में चढ़वा देता है।

सुस्त भी वह एक नम्बर का है। किसी खेल में भी तो वह भाग नहीं लेता। सारा दिन चरते रहने और बैठे रहने के कारण उसका शरीर फूल कर कुप्पा हो गया है। वह इतना अधिक मोटा हो गया है कि कारटून सा दिखाई देने लगा है उसके लिये अब उठना बैठना भी कठिन हो गया है, जिसका परिणाम यह हुआ है कि उसमें स्फूर्ति और उद्यम नाम को भी नहीं रहा।

× × ×

यशवन्त माता-पिता की इकलौती सन्तान है। और फिर है भी लड़का। माँ स्थायी रोगिनी है, इसलिये उसके यहां कोई और सन्तान हुई ही नहीं। परिणाम यह है कि यशवन्त अपने माता-पिता की समस्त अभिलाषाओं और सारे स्नेह का केन्द्र बना रहा है। जब वह छोटा था तो उसकी माता कई वर्षों तक बहुत बीमार रही। उन दिनों वह या तो ननिहाल में भेज दिया जाता था या उसे उसके दादा-दादी सम्भालते थे। ये लोग उसकी हर बात मानने के लिये विवश रहे हैं। दादी तो विशेष रूप से हर घड़ी उसके लाड-प्यार में लगी रही है। उसके पिता प्रातः काल ही दफ्तर में चले जाते हैं और शाम को वापिस आते हैं।

जब उसकी माता लम्बी बीमारी से निवृत्त होकर घर का काम-काज संभालने के योग्य हुई तो उस समय यशवन्त आठ वर्ष

का हो चुका था। माता ने देखा कि लड़का बहुत बिग
वह उसे देख-देख कर बहुत चिन्तित रहती कि बड़ा
लड़का क्या करेगा। उसकी हठ की बातें उसे बहुत बुरी
वह उसे समझाती, धमकाती और अधिक रोष आने
मारने भी लगती। परन्तु जब दादी को इस बात का पत
तो बेचारी मां के लिये संकट खड़ा हो जाता। दादी अ
से शिकायतें करती—"यदि मुन्ना हठ करता है तो क्या आप
गई। बेचारा बचा ही तो है। बह भी धर्मपत्नी की डाँट
करने लगता। बहू और सास में झगड़ा हो जाता और यश
की विजय होती।

बस, इसी प्रकार मां सर पटकती और झुँझलाती रहती
बाप सारा दिन घर से बाहर रहता। इसलिये जो यशवन्त के
में आता वह करता रहता। और जिन दिनों दादी वहाँ होती
यशवन्त के लिये मौज ही मौज रहती। जब दादी कुछ महीनों
के लिये अपने दूसरे बेटों के यहाँ चली जाती तो सारा-सारा दिन
मां बेटों में ठनी रहती। बाप जब घर में आता तो मां बेटे के
विरुद्ध शिकायतों का दफ्तर खोल कर बैठ जाती। बाप लड़के को
कभी डाँटता और कभी चुप रह कर बात टाल देता। जब परीक्षा
के दिन समीप आ जाते तो यशवन्त को मार-पीट कर पुस्तकें
पढ़ने के लिए बिठाया जाता। वह पुस्तकें सामने रखकर बैठा
रहता परन्तु पढ़ाई की ओर लेश-मात्र भी ध्यान नहीं देता।
बराबर वाले कमरे में बैठे हुए माता पिता की बातें सुनता रहता।

हो नहीं, वरन् कभी-कभी उनकी बातों में हस्तक्षेप भी करने लगता। बाप कठोर आवाज़ में कहता, तुम अपना काम क्यों नहीं करते। तुम्हारा ध्यान तो हमारी बातों में है, तुम पढ़ क्या रहे हो?

प्रातः समय घंटा भर तक उसके साथ झक-झक करके से जगाया जाता, फिर उसकी दस में से पाँच हठें पूरी की जातीं, तब कहीं बड़ी कठिनाई से वह स्कूल जाता।

यह हाल होता है उन बच्चों का जो दादा-दादी या नाना नानी के यहाँ पलते हैं। इकलौते बच्चे अनुचित लाड-प्यार से यों बिगड़ जाते हैं।

गुरदीप रेलवे विभाग के एक देसी "साहब बहादुर"
(एस. डी. ओ.) का छोटा लड़का है। उनका बड़ा लड़का
कालिज में पढ़ रहा है। उनके दो-तीन लड़कियाँ भी हैं जो स्कूल
में विद्या अध्ययन कर रही हैं। गुरदीप छुटपन ही से कुछ
कमजोर, दुबला-पतला था। इसलिये "मेम साहब" उस
अधिक ध्यान रखती थीं। नौकर-चाकर काफी थे इसलिए "बाब
लोग" हर समय नौकरों की गोद में रहता था। मेम साहब उसे
थोड़ी देर के लिए भी घर से बाहर न निकलने देती थीं—कहीं
ऐसा न हो कि उसे हवा लग जाये या वह कहीं गिर पड़े और
कपड़े खराब हो जाएँ। इसलिये बैरे और खानसामे गुरदीप को
कोठी और अहाते के अन्दर घुमाते-फिराते रहते थे। जब वह
बहुत छोटा था तब मेम साहब उसे बल-पूर्वक पकड़कर विशुद्ध
और दूध आदि देती थी। परन्तु चार मास का होने के बाद तो
ने का नाम सुनकर ही वह भाग जाता था। माँ पीछे-पीछे
दौड़कर उसे पकड़ती थी और उसे दो-चार घूँट दूध पिला देती
। सुबह ही गुरदीप को नौकर कपड़े पहनाकर तैयार कर देते

और वह कोठी के घास के मैदान में खेलता रहता। पड़ौस के बंगलों से अन्य बच्चे भी वहाँ आ जाया करते और गुरदेव घर से गेंद-बल्ला या फुटबॉल लाकर उनके साथ खेला करता। खेलने में वह अपने कपड़े खराब कर लेता और मेम साहब तुरन्त उसे नौकर के साथ बुलवाकर उसके कपड़े बदलवा देती। वह बाहर जाकर फिर खेल में लग जाता और थोड़ी देर में उसके कपड़ों की फिर वही दुर्दशा हो जाती। मेम साहब फिर उसे बलपूर्वक अन्दर बुलवा लेती और उसके कपड़े फिर बदले जाते।

'बाबा' को खाना खाने की भी विशेष चिन्ता नहीं थी। जब खेल में मग्न होता तो आवाजें देने और नौकरों के बुलाने पर भी वह वहाँ से न हिलता। अन्ततः खानसामा बलपूर्वक उसे पकड़कर लाता और उसकी मिन्नतें करके उसे कुछ खिला देता। मेम साहब ने उसके लिये कई प्रकार के बलदायक व पाचन-शक्ति-वर्धक औषधियाँ मंगवाईं। सर्दियों में उसे कई वर्ष लगातार मछली का तेल पिलाया गया, परन्तु वह ज्यों का त्यों दुबला ही रहा।

शरीर से दुर्बल होने के कारण उसे सात वर्ष तक स्कूल में प्रविष्ट नहीं कराया गया। मेम साहब को उसके स्वास्थ्य की हर समय चिन्ता रहती थी और साथ ही इस बात का भी डर रहता था कि कहीं दूसरे लड़के उसे पीट न दें। साहब बहादुर अधिकतर बाहर दौरे पर रहते थे। चौथे-पाँचवें दिन जब वह घर वापिस आते तो गुरदेव उनसे दूर ही दूर रहता और बात भी न करता

साहब को कहते भी कि गुरदीप को स्कूल में दाखिल करा देना चाहिये, वह स्वयमेव स्वस्थ और तगड़ा हो जाएगा। परन्तु वह कब सुनने वाली थी?

अन्ततः सात वर्ष का हो जाने पर उसे ज्यों-त्यों करके स्कूल में भेज ही दिया गया। परन्तु एक नौकर सारा दिन स्कूल के भवन में या कहीं आस-पास बैठा रहता था। वही उसका बस्ता लाता, ले जाता, और वही उसे कमरे के अन्दर तक पहुँचाता था। अध्यापक को विशेष रूप से कह दिया गया था कि वह बाबा को कुछ न कहे। अध्यापक तो डरता था कि 'बाबा' साहब बहादुर का लड़का है। परन्तु भला उसके सहपाठी कब इस बात की परवाह करने वाले थे। कुछ दिन तक तो गुरदीप अजनबियों की भांति बिना किसी से बात-चीत किये नौकर के साथ आता जाता रहा। अध्यापक भी उसे अपनी कुर्सी के पास दूसरी कुर्सी बिछवाकर बिठाता रहा। स्कूल के समय में नौकर भी दो-तीन बार कमरे के अन्दर झाँक कर देख जाता कि बाबा कहीं उदास तो नहीं है। पर यह परायापन और विलगता कब तक निभ सकती थी। कुछ दिनों के बाद बाबा ने धीरे-धीरे कुछ लड़कों को अपना साथी बनाना प्रारम्भ किया। एक लड़का पड़ोस ही का था। उसके कहने पर गुरदीप खेल की घंटी में अपने सहपाठियों के साथ खेलने लगा। मेम साहब को इस बात से बहुत प्रसन्नता हुई।

...की ओर लेशमात्र भी ध्यान नहीं देता था।

...मिन्नत करके उसे पढ़ाने का प्रयत्न करता।

परन्तु यह टस से मस न होता और बुत बना रहता। ड्राइंग में उसे कुछ रुचि थी। अतः थोड़ी बहुत ड्राइंग कर लेता था। परन्तु अंग्रेजी और गणित की ओर तो वह लेशमात्र भी ध्यान न देता था। इसका परिणाम यह हुआ कि वह श्रेणी के साथ न चल सका, और उसके साथी पढ़ने-लिखने में उससे बहुत आगे निकल गये। अब कक्षा में बैठने से उसका जी घबराने लगा। ड्राइंग की घंटी को छोड़कर दूसरी घंटियों में वह कक्षा में से बाहर चला जाता और बाहर मैदान में जाकर खेलने लगता। अपने ही जैसे उसने तीन-चार साथी तलाश कर लिये। अध्यापक प्रयत्न करके हार गया। परन्तु गुरदीप ने अपनी चाल न बदली। उधर मेम साहब ने अध्यापक को कहला भेजा कि बाबा को पढ़ाई के सम्बन्ध में अभी कुछ न कहा जाय।

पांच-छः महीने इसी प्रकार व्यतीत हो गये। अब बाबा ने स्कूल जाना ही छोड़ दिया। मेम साहब प्रातःकाल मिन्नतें करके उठातीं और उसकी कितनी ही खुशामदें करतीं। परन्तु वह स्कूल जाने के लिये तैयार ही न होता। इस प्रकार पांच-छः दिन व्यतीत हो गये। जब साहब दौरे से लौटे तो पूछ-ताछ करने पर उन्हें पता लगा कि गुरदीप ने स्कूल में अपने सहपाठियों की एक टीम बनाई हुई थी। साहब का लड़का होने के कारण सब उसका रौब मानते थे। एक सप्ताह हुआ स्कूल में एक मैजिस्ट्रेट का लड़का कर्ण प्रविष्ट हुआ था। उसने बाबा का रौब नहीं माना। एक बार उन दोनों की आपस में लड़ाई भी हुई। अध्यापक के पास

शिकायत पहुँची तो उसने उन्हें प्यार से समझा दिया। अगले दिन बाबा स्कूल न जाना चाहता था। उसे बलपूर्वक भेज दिया गया। परन्तु वह कक्षा में नहीं बैठा, अपने साथियों को लेकर मैदान में खेलता रहा। खेल की घंटी बजी तो कर्ण भी खेल के मैदान में आ गया। उसे देखते ही बाबा ने अपना फुटबाल उठा लिया और घर लौट गया। उसके बाद वह स्कूल में न गया। एक महीना बीत गया, दो बीत गये, तीन बीत गये और इसी प्रकार गुरदीप आठ वर्ष का हो गया। न वह स्कूल जाता और न वह घर पर पढ़ने लिखने का नाम लेता। सारा दिन कोठी के अन्दर या बाहर मिट्टी में खेलता रहता। सवेरे आठ बजे से पहले बिस्तर से उठने का नाम न लेता और जब उठता तो तुरन्त बाहर जाकर खेल में लग जाता। दस बजे उसे बड़ी कठिनाई से खींच-खाँच कर लाते और स्नान कराते। दिन में वह कई बार कपड़ों को मैला करता था। कहने को तो वह आठ वर्ष का हो गया था परन्तु उसकी आदतें पाँच वर्ष के बच्चों जैसी थीं।

अन्ततः हार कर साहब ने घर पर पढ़ाने के लिये एक अध्यापक लगाया। बाबा कुछ दिन उससे पढ़ा भी, परन्तु उसने फिर पुरानी चाल पकड़ ली। उसने अध्यापक के साथ बात-चीत करनी ही छोड़ दी। यदि कोई अध्यापक बात पूछता तो वह उसका उत्तर न देता। और दो-चार मिनट के बाद घास के मैदान में खेलने लगता। अध्यापक बुलाने जाता तो वह वहां से दूर भाग जाता या माथे पर त्यौरियां डाल कर सिर नीचा करके

अध्यापक के पास बैठ जाता—पढ़ने का नाम न लेता।

× × ×

यह हाल होता है उन बड़े घरों के बच्चों का जहाँ बहुत से नौकर-चाकर आगे-पीछे फिरने वाले हों, जहां बच्चे की साधारण सी शारीरिक दुर्बलता की बात को बार-बार दोहरा कर उसे सदा के लिए दुर्बल बना दिया जाय, जहां बच्चा इतना शासन करना सीख गया हो कि बाहर के संसार में भी अगर उसका शासन चल सके तब तो वह उस संसार में जाना पसन्द करे अन्यथा वह संसार ही उसे अच्छा न लगे। जिस घर में बच्चों की स्वच्छता का विचार वहम की सीमा तक पहुँच जाता है उसके बच्चे कपड़ों की अधिक दुर्दशा करते हैं और वे अपने शरीर को और अपने वस्त्रों को स्वच्छ रखना सीखते ही नहीं।

जीत एक बारह साल का लड़का है । वह बहुत चतुर है
ने लिखने में भी बहुत योग्य है । परन्तु उसका शरीर
नहीं है, स्कूल के खेलों में वह कोई भाग नहीं लेता, स्कूल
कर वह घर से बाहर पांव नहीं रखता । घर के अन्दर ही
 साथ खेलता रहता है।

जीत का पिता रेलवे विभाग में एक बड़ा पदाधिकारी है
वह दूसरों पर रौब जमाने की आदत सीख गया है और
अपनी इच्छा के अनुसार करना-कराना चाहता है।
र में उसका पूरा शासन है। उसे मुँह मांगी वस्तु मिल
 अच्छे से अच्छे वस्त्र, बाइसिकल, फाउन्टेन पैन, घड़ी
 एकत्रित कर रखी हैं। कुछ रुपये भी उसने अपने
 जमा कर रखे हैं। उनमें से वह एक पैसा भी खर्च
।

दिल बहुत छोटा है। साधारण सी बात पर झट रोने
अपने माता-पिता से वह अलग नहीं होना चाहता।
 थोड़ी भी बीमार हो जाए तो जगजीत के आँसू बहने

लगते हैं। यदि उसके बड़े भाई या बहिनों में से कोई कहीं जाने लगता है तो वह रोना शुरू कर देता है।

जगजीत के माता-पिता उसका बहुत ख्याल रखते हैं। उसके पेट में साधारण सा दर्द हो जाय तो तुरन्त कई डाक्टरों को बुला लिया जाता है और औषधियों के ढेर लगा दिये जाते हैं। यदि किसी दिन उसका मन भोजन करने को न करता हो तो उस की माँ भोजन की थाली हाथ में लिये उसके पीछे-पीछे घूमती रहती है। वह नियत समय पर कभी खाना नहीं खाता। दूध को तो वह छूना तक नहीं। माँ मिन्नतें करती है, हाथ जोड़ती है, परन्तु सब व्यर्थ। जब वह बहुत मिन्नतें करने पर भी नहीं मानता तो उसकी माँ को भी क्रोध चढ़ जाता है और क्रोध के आवेश में वह जगजीत को गालियां देने लगती है। उस समय जगजीत भी स्वयं अपने आपको गालियां देने लगता है और कहने लगता है, "मैं रेल गाड़ी के नीचे आजाऊँगा या कुछ खाकर मर जाऊँगा।"

इस प्रकार के कई कौतुक नित्य प्रति उस घर में होते रहते हैं। जगजीत के पिता उस समय साधारणतया घर में नहीं होते। यद्यपि जगजीत अपने पिता से थोड़ा-बहुत डरता भी है, परन्तु

यहां कोई स्कूल नहीं था। वहां जाने से उसकी शिक्षा बन्द हो जाती। उसका बड़ा भाई शहर के एक कालिज में प्रोफैसर था। वे उसे वहां छोड़ना चाहते थे। वह स्वयं भी वहां जाना चाहता था, परन्तु अपने माता-पिता को भी वहां ले जाना चाहता था। माता-पिता शहर में नहीं रहना चाहते थे, क्योंकि वहां खर्च अधिक होते हैं। अन्ततः कई महीनों के विचार-विनिमय के बाद जगजीत को बड़े भाई के पास भेज दिया गया। उसकी माता भी दो-चार दिन के लिये वहां जाकर रही। पहले तो वह ठीक ठाक रहा, परन्तु जब माता वहां से चलने लगी तो जगजीत की आँखों में आंसू भर आए। माता चली तो आई, परन्तु रास्ते भर उसे जगजीत का ही ध्यान रहा। घर पर पहुँच कर भी उसका मन पुत्र में ही पड़ा रहा। यद्यपि माता के आने के पश्चात् जगजीत का मन वहां लग गया था, और जगजीत के भाई ने उसके सम्बन्ध में माता-पिता को पूर्ण आश्वासन का पत्र भी लिख दिया था, परन्तु उन्हें विश्वास न होता था। कुछ ही दिनों के पश्चात् जगजीत के पिता वहां आ पहुँचे और तीन-चार दिन वहां ठहरे। रविवार के साथ एक दो दिन की और छुट्टियां लेकर वे जगजीत को अपने साथ गांव ले गए ताकि वह अपनी माता से भी मिल आए। वहां वह दो-तीन दिन खूब हंसता-खेलता रहा। शहर लौटते समय उस की आँखें फिर भर आईं। माता का ध्यान सारा दिन उसी में लगा रहा। जब नौकर उसे शहर में छोड़ कर वापिस आया तो उसने बतलाया कि जगजीत उसके आने के समय रोने लगा था।

उसने नौकर के हाथ माता को संदेश भेजा था कि वह उसके पास जाकर रहे, क्योंकि उसका जी नहीं लगता। यह सुनकर माता ने रोना शुरू कर दिया। बड़े लड़के को तार दिया गया। लम्बे २ पत्र लिखे गये। उसने उत्तर में लिखा कि जगजीत उसी दिन ठीक हो गया था और उसके बाद वह कभी उदास नहीं हुआ। परन्तु माता-पिता को इस बात पर विश्वास नहीं हुआ।

इसी उधेड़बुन में न तो जगजीत का मन लगता था और न उसके माता पिता का। कभी वे शहर जा पहुंचते थे और कभी उसे गांव में ले आते थे। इसका परिणाम यह हुआ कि जगजीत की शिक्षा में गड़बड़ होने लगी।

× × ×

जगजीत अपने माता-पिता का सबसे छोटा लड़का होने के कारण सबसे अधिक लाडला रहा है। माता-पिता के सारे स्नेह और प्रेम का केन्द्र वह इसलिये भी था कि उनके यहां बड़े लड़के के बाद कई वर्ष तक और कोई सन्तान नहीं हुई थी। यदि कोई बच्चा हुआ भी तो वह जीवित न रहा। कई मिन्नतें मानने के बाद यह लड़का जीवित रहा था।

बस, जगजीत की सारी बीमारी यही है। इस तरह की अभिलाषाओं के और मिन्नतों के फल-स्वरूप होने वाली सन्तान को माता-पिता लाड़-प्यार से इतना बिगाड़ देते हैं कि फिर वे सँवरने में नहीं आती।

: ६ :

चौदह वर्षीय सत्येन्द्र मोहन हर दृष्टिकोण से एक अच्छा लड़का है। उसके पिता एक विख्यात कांग्रेसी नेता हैं। लड़के के हृदय में भी स्वाधीनता के लिये तड़प है। जब पिता पकड़े गये तो उसने खूब नारे लगाये थे। परन्तु छोटा होने के कारण पुलिस ने उसे छोड़ दिया था।

विद्याध्ययन में वह कुछ पिछड़ा हुआ है, परन्तु अपनी ओर से पूरा प्रयत्न और परिश्रम करता है। इतना बड़ा और गुणवान होते हुए भी उस में कुछ आदतें बच्चों की सी हैं। यदि उसकी कोई बात न मानी जाये तो वह बच्चों की भांति सिसकना और बिलबिलाना शुरू कर देता है। क्रोधावेश में आकर वह घर से बाहर भाग जाता है। उस समय उसका व्यवहार चार पाँच वर्ष के बच्चों का सा होता है।

× × ×

सत्येन्द्र मोहन अपने माता-पिता का बड़ा लड़का है। उसकी दो बड़ी बहनें हैं। उन लड़कियों के बाद माता ने बड़ी मिन्नतें मान कर यह पुत्र प्राप्त किया था। इसलिये वह सदा माता-पिता

का बहुत लाडला बेटा रहा है। चौदह वर्ष की आयु में भी वह अपने माता-पिता की दृष्टि में 'काका' ही था। और सचमुच उसके अन्दर बच्चों जैसी आदतें थीं।

बड़ी अभिलाषाओं और मिन्नतों के बाद प्राप्त होने वाले बच्चों से माता-पिता औचित्य से अधिक प्यार करते हैं। उनकी हर बात मानी जाती है। परन्तु उनके प्रति इस प्रकार का व्यवहार उन्हें बड़ा होने पर भी अपने पांव पर खड़े होने के योग्य नहीं बनने देता।

बशीर बहुत योग्य लड़का है। वह बी० ए० में पढ़ रहा है। कालिज की पाठ्य-पुस्तकों के अतिरिक्त उसने साहित्य का अच्छा अध्ययन किया है। साहित्यिक शोध का भी उसे बड़ा चाव है। वह लेखनी का भी धनी है और बड़ी प्रभावशाली वक्तृता देता है। उसके प्रोफेसर उसकी योग्यता की बड़ी प्रशंसा करते हैं। कालिज की पढ़ाई वह बहुत कम करता है और दूसरी पुस्तकें अधिक पढ़ता है। फिर भी वह प्रत्येक विषय में प्रथम रहता है।

बशीर लाहौर के एक कालिज के बोर्डिंग-हाउस में रहता है। उसका कमरा बेहद गंदा और कूड़े-करकट से भरा रहता है। कई दिन तक उसके कमरे में झाड़ू नहीं लगता। उसका बिस्त... भी मैला-कुचैला और उलटा-सुलटा पड़ा रहता है। कपड़े भी इसी तरह अस्त-व्यस्त अवस्था में बिखरे पड़े रहते हैं। सारांश यह कि कमरे में पूरी अव्यवस्था रहती है। कोई भी वस्तु अपने निश्चित स्थान पर नहीं रखी जाती। कमरे में कई दिनों के जूठे बर... भी जहाँ-तहाँ पड़े रहते हैं।

बशीर सर्दियों में सात २ आठ २ दिन तक स्नान न...

: ७ :

बशीर बहुत योग्य लड़का है। वह बी० ए
कालिज की पाठ्य-पुस्तकों के अतिरिक्त उसने सा
अध्ययन किया है। साहित्यिक शोध का भी उसे
वह लेखनी का भी धनी है और बड़ी प्रभावशाल
है। उसके प्रोफेसर उसकी योग्यता की बड़ा प्र
कालिज की पढ़ाई वह बहुत कम करता है औ
अधिक पढ़ता है। फिर भी वह प्रत्येक विषय में

बशीर लाहौर के एक कालिज के बोर्डिंग-हाउ
उसका कमरा बेहद गंदा और कूड़े-करकट से भरा
कई दिन तक उसके कमरे में झाड़ू नहीं लगता
भी मैला-कुचैला और उलटा-सुलटा पड़ा रहता है
तरह अस्त-व्यस्त अवस्था में बिखरे पड़े रहते हैं
कमरे में पूरी अव्यवस्था रहती है। कोई भी वस
स्थान पर नहीं रखी जाती। कमरे में कई दिनों
भी जहां-तहां पड़े रहते हैं।

बशीर सर्दियों में सात २

स्वयं स्कूल जाने लगेगा। परन्तु कुछ दिन व्यतीत हो
उसका वही हाल रहा। पढ़ने लिखने का वह नाम न लेत
घड़ी खेलने में मस्त रहता। या रो-धो कर और हठ
करने के लिये पैसे ले लेता और बाजार में जाकर वह कु
खाता। बस यही उसका नित्य का कार्य-क्रम बन गया था

उसके माता-पिता को बहुत चिन्ता हुई। अध्यापक
थे कि इसका क्या इलाज किया जाय। पिता ने कहा
हठ करने की और क्रोध करने की आदत बचपन से है
भी वह अपनी मनमानी करता है। जो चाहे तो कहना
नहीं तो किसी की बात नहीं सुनता।

दो तीन महीने इसी प्रकार व्यतीत हो गये। परन्तु
की ओर से विमुख ही रहा। इन्हीं दिनों वह फिर बीमार प
इस बार जब वह चारपाई से उठा तो पढ़ने लिखने से उ
पूर्ण रूप से उचाट हो चुका था। उसके अन्दर हठ और क्रो
भी बढ़ गया। तनिक सी बात पर वह झट रोने लगता थ
छः महीने इसी तरह व्यतीत हो गये। अब माता-पिता को
चिन्ता होने लगी। कोई कहता था इसे लाड़-प्यार ने बिगा
है। परामर्श देता था कि इसके साथ कठोरता का
। परन्तु सुखदेव को यदि पकड़ कर कक्षा
। था तो वह वहां कोई काम न करता था।
ओर की आलोचनाओं ने, माता पिता की चिन्त

लम्बी बीमारी तो प्रौढ़ अवस्था के लोगों के मन में भी
परिवर्तन कर देती है। फिर बच्चों का तो कहना ही क
उसका व्यक्तित्व लम्बी बीमारी के बाद विशृंखल सा हो ज
है। उसे पुनः व्यवस्थित करने के लिये बच्चे के साथ सम्बन
रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति को उसके साथ पूरा सहयोग देन
चाहिये।

कह दिया था कि यदि वीर स्कूल से अनुपस्थित रहे तो उसे कड़ा दण्ड दिया जाय।

जब कैप्टेन साहब छुट्टियाँ समाप्त होने पर अपनी नौकरी पर वापस चले गये तो वीर ने स्कूल जाना छोड़ दिया। अध्यापक ने कई बार बुलाया और एक-दो बार उन्होंने लड़कों को भेजा जो वीर को खींच-खाँच कर स्कूल में ले गये। अध्यापक ने उसे मार पीटा भी, परन्तु वीर का तो स्कूल के नाम से ही जी घबराता था। उसकी माता कहती थी कि पढ़ लिखकर इसे नौकरी थोड़े ही करनी है। बाप बहुत कुछ कमा रहा है, दोनों बेटे आराम से बैठकर खायेंगे। वीर को और क्या चाहिए था ? उसने स्कूल में आना बन्द ही कर दिया। वह सारा दिन गाँव में आवारा घूमता रहता।

उसके पिता जब घर वालों को पत्र लिखते तो उसमें वीर को पढ़ाने के लिये अवश्य ताकीद करते। एक वर्ष के बाद कैप्टेन साहब फिर छुट्टियों में घर आये। उन्हें वीर पहले जैसा ही गंदे चीकट कपड़े पहने हुए गाँव में घूमता दिखाई दिया। उसे देखकर वह बहुत लज्जित हुए। वे उससे मिले तो सही परन्तु अन्दर ही अन्दर क्रोध की घूँट पीकर मिले।

दूसरे ही दिन घर में वीर की पढ़ाई के सम्बन्ध में फिर झगड़ा शुरू हो गया। उन्होंने वीर को प्यार और नर्मी से समझाया। पर वह मानने में न आता था। माँ पास बैठी हँसकर कह देती, "बाप की जमींदारी बहुतेरी बड़ी है। इसे पढ़कर क्या

लेना है ? बड़ा होकर जमींदारी सम्भाल लेगा।"

कैप्टेन साहब वीर पर बड़े क्रुद्ध हुए। उसे मारा भी। परन्तु वह टस से मस न हुआ। एक दिन कैप्टेन साहब को बहुत क्रोध आया। उन्होंने वीर को बेत से बहुत मारा। थोड़ी देर पिटने के बाद वीर कैप्टेन साहब के सामने डटकर खड़ा हो गया और कहने लगा—"आप जितना चाहें मार लें। परन्तु मैं कदापि नहीं पढ़ूँगा।" इस पर बाप का पारा और भी चढ़ गया और वे उसे और भी जोर-जोर से मारने लगे—यहाँ तक कि उनकी छड़ी टूट गई। परन्तु दस-वर्षीय वीर निश्चेष्ट खड़ा रहा। कैप्टेन साहब हार गये और वीर की विजय हुई।

× × ×

बच्चे सैनिक ढंग के अनुशासन और कड़ाई से क़ाबू नहीं आते। कैप्टेन साहब के घर का और गाँव का वातावरण वीर की पढ़ाई के मार्ग में बड़ी भारी रुकावट था।

: १० :

राजेन्द्र एक चौदह-वर्षीय हृष्ट-पुष्ट लड़का है। खे
दौड़ों में स्कूल भर में सब से प्रथम रहता है। परन्तु
में बहुत पीछे है। उसकी योग्यता पांचवीं कक्षा के बराब
है। पढ़ने का नाम लेते ही उसके होश गुम हो जाते ह
लिखने के मुकाबले में उसके छोटे २ सहपाठी उसकी हँ
हैं तो वह रोने लगता है। चौथे-पांचवें दिन उसे सर
दौरा हो जाता है। क़ै पर क़ै आने लगती है, और बेचारा
दिन के लिये बिस्तर का मेहमान हो जाता है। पढ़ते सम
उसे विशेष रूप से सर-दर्द हो जाता है। परन्तु खेल-कूद के
वह बिल्कुल ठीक हो जाता है। बहुत इलाज किया गया
उसका दर्द दूर नहीं होता।

× × ×

राजेन्द्र के पिता एक अच्छे प्रतिष्ठित और प्रभावश
व्यापारी हैं। राजेन्द्र के चाचा और ताऊ इत्यादि भी धनाढ्य
प्रतिष्ठित आदमी हैं। वे सब अपने समय में फुटबॉल, हॉ
आदि के विख्यात खिलाड़ी रहे हैं। प्रांतीय और देश की म

टीमों में मैच खेलते रहे हैं। परन्तु सब भाइयों में से एक भी उच्च शिक्षा ग्रहण नहीं कर सका। सब स्कूल छोड़कर भाग जाते रहे। कोई भी मिडिल से ऊपर नहीं पहुँच सका।

पहले सब भाइयों का व्यापार सम्मिलित था। राजेन्द्र के दादा की मृत्यु के बाद उसके पिता और चाचा, ताऊ इत्यादि में काफ़ी झगड़े होते रहे। फिर कुछ दिनों के बाद सब अलग-अलग हो गये। झगड़े यहाँ तक हुये कि आपस की बोल-चाल भी बन्द हो गई।

राजेन्द्र बहुत वर्षों तक अपने घर का इकलौता बेटा रहा। दो लड़कियों के बाद यह पहला लड़का था। उसका छोटा भाई उससे सात-आठ वर्ष छोटा है।

× × ×

राजेन्द्र के घर में पढ़ने-लिखने का वातावरण नहीं है। सारा दिन व्यापार की ही बातें होती रहती हैं। व्यापार के अतिरिक्त यदि उस घर के लोगों में किसी बात की ओर रुचि है तो वह खेलों के प्रति है। बहुत दिनों तक इकलौता लड़का रहने के कारण उसे घर में सब का अत्यधिक लाड़-प्यार प्राप्त रहा है। उसने सब पर शासन किया है। यह स्थिति छोटे भाई के जन्म के पश्चात् उससे छिन गई। स्थिति छिन जाने के अतिरिक्त उसे 'निकम्मे' की उपाधि भी मिलने लगी। माता-पिता की इच्छा थी कि अब वह पढ़ने-लिखने में कुछ योग्यता प्राप्त करे। परन्तु उनकी यह इच्छा पूरी होती दिखाई न देती थी। एक ओर बाप

भी महत्वपूर्ण है। जब राजेन्द्र छः-सात वर्ष का था तो उ
कुटुम्ब में झगड़े शुरू हो गये थे। हमारे घरों में ये व्यक्ति
या कौटुम्बिक झगड़े बच्चों की उपस्थिति में ही होते रहते हैं। इ
बातों का बच्चों के व्यक्तित्व पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है।

राजेन्द्र का सर-दर्द, डर जाना और उसके व्यक्तित्व की अन्य दुर्बलताएँ उसके चारों ओर के वातावरण का परिणाम थीं। उसका सर-दर्द वास्तव में शारीरिक रोग नहीं वरन् मानसिक रोग है। उसका सारा व्यक्तित्व रुग्ण व्यक्तित्व है जो उसके गुणों को भी उसकी कमियों के नीचे छुपाए रखता है।

: ११ :

बारह-वर्षीया गुरदीप कौर अत्यन्त तीक्ष्ण-बुद्धि और योग्य लड़की है। वह बहुत अच्छी-अच्छी बातें करती है। प्यार की भूखी है। पढ़ने-लिखने का उसे असीम चाव है। उसे उर्दू की कोई पुस्तक दें, तुरन्त पढ़ डालेगी। कविताएँ पढ़ने का उसे विशेष चाव है। परन्तु गणित में उसे कोई रुचि नहीं है। वह रुष्ट भी बहुत शीघ्र हो जाती है। झट रूठ जाती है, हठ करने लगती है और कहना नहीं मानती। झूठ बोलने की भी उसे आदत है। दूसरों की वस्तुएँ चुरा लेने से भी नहीं चूकती और बाद में मुकर जाती है। यही नहीं, वरन् क़समें खाने लगती है और रोना शुरू कर देती है कि इस पर झूठा दोषारोपण किया गया है। रूठकर सारा दिन कमरे के अन्दर पड़ी रहती है। न कुछ खाती है न पीती है। इसके अतिरिक्त कभी-कभी वह रात को सोते में बिस्तर में ही पेशाब कर देती है।

× × ×

गुरदीप कौर अभी गोद की बच्ची ही थी कि उसकी माँ एक दिन उसे कमरे में बन्द करके किसी के साथ 'भाग' गई। उसका

पति वृद्ध था और यह उसकी दूसरी शादी थी। गुरदीप की
माँ युवती थी और सुन्दरी थी। माँ के भाग जाने के
गुरदीप कौर का किसी दूसरे घर में पालन-पोषण हुआ।
दिनों के बाद उसका बूढ़ा बाप भी स्वर्ग सिधार गया।

गुरदीप कौर के नये 'भैया' और 'भाभी' ने बड़े प्रेम से और
परिश्रम से उसका पालन-पोषण किया। उनके अपने भी कई बच्चे
थे। बड़ी होकर गुरदीप कौर ने घर के बहुत से काम का भार अपने
कन्धों पर ले लिया था। उसकी 'भाभी' कुछ तीखे स्वभाव की थी,
परन्तु 'भैया' बहुत सरल और मधुर स्वभाव के व्यक्ति थे। वे
चुपचाप रहना अधिक पसन्द करते थे और अपने आप में मस्त
रहते थे।

गुरदीप कौर बचपन से ही घर में यह बात सुनती आई थी कि
उसकी माँ किसी के साथ 'भाग' गई थी और उसने एक दो बार अपने
पति को विष देने का प्रयत्न भी किया था। इन बातों का ज्ञान उसके
सम्पूर्ण व्यक्तित्व पर प्रभाव डालता था। उसके व्यक्तित्व के दो
पहलू थे। जब उसकी मानसिक स्थिति ठीक होती थी तो वह अपना
कार्य बड़े चाव और प्रेम से करती थी। परन्तु जब उसकी कोई बात
मानी जाती तो उस का मिजाज बिगड़ जाता और उस समय
सब के लिये संकट का कारण बन जाती। जब कभी रात को
में उसका पेशाब निकल जाता तो सवेरे बिस्तर के सारे कपड़े
स्वयं धोने पड़ते। इसके अतिरिक्त उसकी पिटाई भी होती। घर
और घर से बाहर भी उसकी यह आदत उसके उपहास का

कारण बनती रहती। छोटे बड़े सब उसका उपहास करते।

घर के वातावरण से निकल कर गुरदीप कौर साल डेढ़ साल बोर्डिंग-हाउस में रही। यहाँ उसने अपनी माँ के भागने की कहानी स्वयं सब को सुना दी। इठ वह यहाँ भी बहुत बार पकड़ लेती—घर से भी अधिक—क्योंकि यहाँ उसकी भाभी की भांति उसे मारने वाला कोई न था। पेशाब कर देने की आदत यहाँ भी उसके उपहास और अपमान का कारण बन गई। चोरी करने की आदत यहाँ पहले की अपेक्षा बढ़ गई—क्योंकि चोरी करने के अवसर बोर्डिंग-हाउस में अधिक प्राप्त हो जाते थे। मुकर वह उसी तरह जाती और रोने भी उसी भांति लगती।

विद्यालय में गुरदीप कौर को एक बहुत लाभ हुआ। यहाँ अध्ययन के लिये उसे बहुत-सी पुस्तकें मिल गईं। वह तथा, कविता, गल्प आदि विषय की प्रत्येक पुस्तक को बड़े चाव और लगन से पढ़ती। जो कविताएँ उसको पसन्द आतीं उन्हें वह अपनी कापी में उतार लेती। जिस दिन वह रुष्ट होती उस दिन तो सवेरे से रात तक पुस्तक पढ़ती या कविताओं को कापी में लिखती रहती। कविताओं में उसकी रुचि इतनी गहरी हो गई कि वह स्वयं कविताएँ रचने लगी। स्कूल की पत्रिका में उसकी कविताएँ प्रकाशित होने लगीं। पहले २ तो वह किसी अध्यापिका से अपनी कविताएँ ठीक करा लेती थी, परन्तु बाद में वह स्वयं सुन्दर और दोष-रहित कविताएँ रचने लगी। उस की कविता भावपूर्ण और कल्पना

उदात्त होती थी। कुछ दिनों के बाद वह सार्वजनिक सभाओं में भी कवितायें पढ़ने लगी।

इस लड़की का अपना जीवन भावनाओं से ओत-प्रोत और गहरी अनुभूतियों से परिपूर्ण था। बड़ी आयु की और अत्यन्त योग्य लड़कियाँ उसकी सहेलियाँ बन गईं। उनके साथ वह नहरों के किनारों, खेतों और मैदानों में फुदकती फिरती थी। प्रकृति उसकी प्रिय सखी थी।

एक दिन वह किसी बात पर रूठ कर कमरे में जा बैठी। वहाँ बैठकर उसने अपने स्वर्गीय पिता को छब्बीस पृष्ठों की एक लम्बी चिट्ठी लिखी जिसके अन्दर उसने अपने जीवन की सम्पूर्ण बातों के सम्बन्ध में विस्तार पूर्वक लिखा और अपने स्वर्गीय पिता के पास जाने की अभिलाषा प्रकट की। परन्तु अन्त में उसने अपनी आत्मिक शान्ति के लिये इस पत्र में यह लिखा कि यदि वह स्वर्गवासी पिता के पास नहीं जा सकती तो वह अपने दूसरे 'बाप' के साथ मन बहला लिया करेगी (उसने अध्यापकों में से एक को अपना पिता बना रक्खा था)।

× × ×

गुरदीप कौर का व्यक्तित्व एक बीमार व्यक्तित्व था। उसका मन बीमार था। चोरी करना उसके स्वभाव का अंश नहीं था, वरन् यह एक मानसिक बीमारी थी। उसका बिस्तर में पेशाब कर देना उसकी कमजोरी के कारण नहीं था, वरन यह भी एक प्रकार मानसिक रोग था। उसका हठ और रूठना सब उसी बीमार

व्यक्तित्व की निशानियां थीं। बहुधा वह प्रयत्न करने पर भी अपने आप को चोरी करने से नहीं रोक पाती थी। लिखित प्रतिज्ञा करने पर भी वह चोरी करने से नहीं रुक सकती थी। इस रोग को 'मनोविज्ञान' में 'क्लैप्टोमेनिया' कहा जाता है। इसी प्रकार रात को बिस्तर में पेशाब करना भी एक मानसिक रोग था जिसे मनोविज्ञान में 'एन्यूरिसिस' कहा जाता है।

इस लड़की के मानसिक रोगों का इलाज मनोवैज्ञानिक ढंग से होना चाहिये था। उपहास करने या दण्ड देने से उसकी चोरी करने या बिस्तर में पेशाब कर देने की आदत दूर नहीं हो सकती थी।

घर के वातावरण से दूर रहकर उसके अन्दर से व्यक्तित्व फूट निकला था। इसी शक्ति ने उसके रोगों का इलाज बन जाना था, परन्तु उसके संरक्षकों ने उसे उस स्कूल से वापस बुला लिया, क्योंकि उनके विचार में उसे चोरी करने की चाट पड़ गई थी। उनके अनुमान से वह स्कूल में और भी कई बुरी आदतें सीख गई थी। उसके संरक्षक उसके व्यक्तित्व के रोग को ठीक-ठीक न पहचान सके। और न ही उन्होंने पहचानने की परवाह ही की।

घर लौट आने के बाद गुरदीप कौर की सारी कवित्व-शक्ति मर गई। प्रोत्साहन देने पर भी वह एक कविता भी नहीं लिख सकी—यद्यपि स्कूल से वह हर सप्ताह कम से कम एक कविता अपने भाई को भेजती थी। इससे घर वालों को सन्देह हो

गया कि वह स्कूल में किसी दूसरे से कविताएँ लिखवाकर भेजती रही है।

गुरदीप कौर की सारी बीमारियों का मूल कारण उसकी मारने वाली माँ थी। उसके बचपन के इतिहास ने ही उसे इस सांचे में ढाल दिया था। उसके बाद उसके घर के वातावरण ने उसका यह व्यक्तित्व बना दिया।

: १२ :

दस-वर्षीय मोहन एक एकान्त-प्रिय और मौन रहने वाला लड़का है। वह बहुत कम बातें करता है। उसके मित्र अंगुलियों पर गिने जा सकते हैं। उन्हीं के साथ वह थोड़ा-बहुत खेल लेता है। अपने अध्यापकों के सामने वह बहुत झिझकता है। उनके सामने आते ही वह सहम जाता है। काम न करने पर यदि अध्यापक उससे पूछ-ताछ करता है तो वह उत्तर तक नहीं देता। कई बार अधिक भयभीत सा होकर श्रेणी के अन्दर ही गुमसुम हो जाता है। उसे होश भी नहीं रहता, जिस पर उसके अध्यापक और सहपाठी घबरा उठते हैं। इसलिये अध्यापक भी स्कूल के काम के संबंध में उससे अधिक पूछ-ताछ नहीं करते।

यदि उसका कोई मित्र उससे लड़ पड़े तो वह किसी कमरे के अन्दर घुसकर बैठ जाता है और उसके अन्दर की कुंडी लगा लेता है। घंटों वह बाहर नहीं निकलता। न खाने-पीने की परवाह करता है और न नहाने की। सारी शारीरिक आवश्यकताओं के प्रति उदासीन होकर चुपचाप अन्दर बैठा रहता है। किसी मित्र की आवाजों पर कुछ घंटों के बाद चाहे वह कमरे का द्वार खोल

थे परन्तु किसी अध्यापक या अपने बड़े के कहने पर कभी द्वार नहीं खोलेगा। कई घंटों के मौन-व्रत के बाद भी बाहर आकर वह नहीं बतायेगा कि वह किस बात पर इतना रुष्ट है। रोता भी नहीं। बस चुप्पी साध लेता है और न कुछ खाता है, न पीता है, और या तो कहीं भाग जाता है, या किसी जगह छुप कर बैठ जाता है।

× × ×

मोहन की माता अपने माता-पिता के पास ही रहती है। कुछ वर्ष पहले वह अपने पति के पास से चली आई थी। तब से वह माता-पिता के पास ही रहती है।

मोहन का पिता बहुत कठोर स्वभाव का व्यक्ति था। वह मोहन की माता के साथ अत्यन्त कटु व्यवहार करता था। कई बार वह उसे बुरी तरह पीट भी देता था। परन्तु वह मुँह से एक शब्द तक न निकालती थी। न ही उसने अपने माता-पिता को इस दुर्व्यवहार और अत्याचार के सम्बन्ध में कभी बतलाया। मोहन के पिता का व्यवहार दिन प्रति-दिन और भी खराब होता गया। आखिर एक दिन उसने अपनी स्त्री को स्वयं उसके मायके भेज दिया। मोहन की मां अपने मायके चली तो गई, परन्तु वहां आकर भी उसने अपने माता-पिता को अपनी कष्टपूर्ण कहानी नहीं बतलाई। माता-पिता को उसकी ससुराल के पड़ोसियों से ही उस

कहानी का थोड़ा-बहुत ज्ञान हो गया था। अब कई वर्षों से मोहन की मां अपने माता-पिता के यहां रहती है।

मोहन के मानसिक नेत्रों के सामने उसकी माँ पिटा करती थी। मोहन क्रोध और दुःख को अन्दर ही अन्दर पी जाता और गुमसुम रहता। मुंह से एक शब्द भी न बोलता। दूसरे शब्दों में वह अपनी माँ का पार्ट अदा कर रहा है।

: १३ :

बारह-वर्षीय सादिक़ अत्यन्त चतुर और होशियार लड़का है। थोड़ा शरारती तो वह अवश्य है, परन्तु लिखने-पढ़ने में कमज़ोर नहीं है। और यदि थोड़े अधिक ध्यान और परिश्रम से काम करे तो अच्छे अंक प्राप्त कर सकता है। परन्तु साधारणतया वह खेलने कूदने में लगा रहता है।

सादिक़ बोलने में थोड़ा सा अटकता है। उसका इलाज बहुत कराया गया, परन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। बादाम, मक्खन और अन्य कई पौष्टिक पदार्थ उसे नियम पूर्वक खिलाए गए हैं, परन्तु उसका वह अटकाव दूर नहीं हुआ। वह अपने से बड़ों के सामने और भी अधिक हकलाता है। परन्तु अपने साथियों एवं मित्रों से बात-चीत करते समय यह हकलापन कुछ अधिक प्रकट नहीं होता। हां, क्रोध अथवा रोष की अवस्था में यह हकलापन बहुत तीव्र हो जाता है।

× × ×

सादिक़ जब सात-आठ वर्ष का था तो उस समय भी वह बहुत शरारती था। गली में, पास-पड़ौस में, स्कूल में, घर में, अर्थात

सब जगह वह सब से छेड़-छाड़ करता रहता था। तांगे वालों से और राह चलते लोगों तक से वह हास्य-विनोद करने से न चूकता था। इस कारण उसके पिता को उसके सम्बन्ध में दिन में कई-कई बार लोगों से शिकायतें सुननी पड़ती थीं। सादिक़ का पिता उससे बहुत तंग आ गया। वह उसे बहुत मारता भी। जब भी कोई शिकायत आती वह बेंत लेकर सादिक़ की खाल उधेड़ डालता और उसे नीचे गिरा कर पूछता, "सच-सच बता दे, तूने उसे क्या कहा था।" परन्तु पिटाई से चूर-चूर होकर और भय एवं त्रास से पराभूत होकर वह उत्तर में एक शब्द भी न बोल पाता। अधिक से अधिक यह होता कि रोते और चीखते-चिल्लाते हुए कुछ अस्पष्ट से शब्द उसके मुँह से रुक-रुक कर निकलते। यह थी सादिक़ के हकलेपन के आरम्भ होने की कहानी।

× × ×

अधिकांश हकले बच्चे इस प्रकार हकलाना शुरू करते हैं। शारीरिक कारण कम बच्चों की अवस्था में होता है। बहुधा मानसिक कारण ही इस रोग की जड़ में होता है। जिह्वा की बनावट में या गले में कोई त्रुटि हो तो यह शारीरिक रोग हो सकता है, अन्यथा इसे एक मानसिक रोग ही समझिये।

कौशल्या अपने तईं एक अत्यन्त कुशल माता सम
अपने तीन लड़कों को वह बिल्कुल ठीक अवस्था में
सुबह-सवेरे उन्हें नहला-धुलाकर, कलेवा कराकर और
पहना कर बहर भेजती है। यदि किसी दिन उसकी त
न हो या वह बीमार हो तो भी वह घर के काम-का
उदासीन नहीं होती। उसका स्वास्थ्य सदा खराब ही
दुबली, पतली और कमजोर इतनी है कि ऐसा लगत
वह अर्ध-जीवित अवस्था में है। उसे कभी तीव्र ज
है और कभी पेट में इतनी तीव्र पीड़ा होती है कि
तक संज्ञाहीन अवस्था में पड़ी रहती है। परन्तु जब
हुआ, झट कपड़ों की गठरी लेकर धोने बैठ जाती है
की असावधानियों से ही उसने अपने स्वास्थ्य का स
लिया है। युवावस्था में उसके पेट में जब बच्चा हो
नौ महीनों में से एक महीना भी आराम से नहीं लेट
पानी के घड़े भरती, बाल्टियाँ उठाती, अनाज के
उधर रखती और कभी यहाँ से वहाँ छलाँगें मारती

पीने की भी उसे रत्ती भर परवाह नहीं होती थी।

उसके तीनों बच्चे प्रकाश, महेन्द्र और जस्सी रूप-रंग में बड़े सुडौल और सुन्दर हैं। भूरी-भूरी आँखें हैं। तीनों निकरें और कमीजें पहन कर जिस समय चलते हैं तो बड़े प्यारे लगते हैं। परन्तु तीनों ने अँगूठे मुँह में डाले हुए होते हैं। प्रकाश आठ वर्ष का है, महेन्द्र छः का और जस्सी चार का। परन्तु तीनों इस आयु तक अंगूठा चूसते हैं।

माँ ने उनकी अँगुलियों पर कुनीन भी लगाई। उनकी अँगुलियाँ बाँध कर रखीं; उन्हें मारा-पीटा, डराया-धमकाया; प्यार से समझाया, परन्तु, तीनों को छुटपन से अँगूठा चूसने की आदत पड़ी हुई है। बड़ा लड़का आठ वर्ष का होने पर भी यह आदत नहीं छोड़ता।

× × ×

अंगूठा चूसना स्वतः कोई बीमारी नहीं है। वास्तव में यह आन्तरिक रोग का चिन्ह है। छोटी आयु में प्रत्येक बच्चा थोड़ा-बहुत अंगूठा चूसता है। परन्तु, यह आदत स्वयमेव धीरे-धीरे दूर हो जाती है। यदि बड़ा होकर भी बच्चा अंगूठा चूसता रहता है तो इसके कई कारण हो सकते हैं। बच्चा छोटी आयु में किसी लम्बी बीमारी में ग्रस्त रहा हो और उसका शारीरिक विकास पूरा न हो पाया हो। या बच्चा वैसे ही कमजोर-सा हो। ऐसे बच्चों को अधिक आराम, स्वास्थ्य-प्रद भोजन, खुली हवा और शीतकाल में कॉडलिवर-ऑयल (मछली का तेल) और धूप मिलनी चाहिए।

अन्य कारण भी हो सकते हैं, जैसे—माँ ने उन्हें कई वर्षों तक 'बेबी' (शिशु) ही बनाए रक्खा हो। ऐसी स्थिति में उसके अन्दर शिशु वाली सारी आदतें—अंगूठा चूसना, तोतली बोली बोलना इत्यादि—काफी समय तक बनी रहती हैं। यह भी हो सकता है कि माँ नासमझी या बीमारी के कारण अपना दूध शीघ्र छुड़ा ले, तो बच्चा अंगूठा चूसना शुरू कर देता है। घर में माँ-बाप के बीच अथवा घर के अन्य व्यक्तियों के बीच में झगड़ा रहता हो तो बच्चे को सोते समय पूरा आराम नहीं मिलता। शोर और लड़ाई-झगड़े में बच्चे की नींद खराब हो जाती है। ऐसी स्थिति में भी बच्चे अंगूठा अधिक चूसने लगते हैं और यह आदत कई वर्ष तक नहीं छूटती।

मारने-पीटने से, झिड़कने-घूरने से, अंगूठा बाँधने से या बच्चे का हर समय उपहास करते रहने से बच्चे की अंगूठा चूसने की आदत नहीं छूटती। इसके विपरीत इन बातों से यह आदत और भी पक्की हो जाती है। इस बीमारी का कारण दूर करना चाहिए; आदत स्वतः दूर हो जाएगी। ऊपर जो-जो कारण लिखे गए हैं उन में से जो भी कारण हुआ हो, घर में से वह कारण दूर करना चाहिए। कई बार बच्चे स्कूल जाकर वहां किसी न किसी काम में अधिक रुचि लेने लगते हैं और इस आदत को स्वयमेव छोड़ देते हैं।

और छोटी २ आदतें जैसे, दांतों से नाखून . अंगुली चबाते रहना आदि भी इसी तरह . वे दूर भी इसी तरह होती हैं।

खब्बू होना कोई दोष नहीं है। परन्तु हमारे अध्यापक और माता-पिता तथा अन्य सब लोग खब्बे हाथ से काम करने वाले बच्चों को इतना तंग करते हैं कि उनका जीवन दूभर बना देते हैं। कोई बच्चा इन्हें बाएं हाथ से कोई काम करता दिखाई दे जाए तो उसके हाथ पर बैंतें मारने लगते हैं, उसकी अंगुलियाँ तोड़ी और मरोड़ी जाती हैं, उसे झिड़का जाता है, लज्जित किया जाता है, और कई बार उसका नाम ही 'खब्बू' या 'खब्बू' रख दिया जाता है।

दाएं हाथ से काम करना वास्तव में केवल एक रिवाज है, एक परिपाटी, जो शताब्दियों से चली आ रही है। दाएं या बाएं हाथ की रगों और पट्ठों में कोई अन्तर नहीं है। जो अन्तर दीखता है वह केवल प्रयोग का है। यदि कोई बच्चा शुरू ही से बायाँ हाथ काम में लाने लगे तो उसके रग-पट्ठे दाएं हाथ के रग-पट्ठों से निश्चय ही अधिक बलवान हो जायेंगे।

इसमें सन्देह नहीं कि हम दूसरों की तरह काम करके ही दूसरों के हास्य-उपहास से बच सकते हैं। समाज 'असाधारण'

व्यक्ति को सहन नहीं करता। यदि किसी बच्चे को ... बाएँ हाथ से काम करने की आदत पड़ जाती है तो इस 'असाधारण' आदत की ओर ध्यान नहीं देना चाहिये। कई बार खब्बू लोग इसलिये खब्बू बन जाते हैं कि रोकने, टोकने और दंड देने तथा उपहास के कारण उनकी यह आदत और भी पक जाती है। कई बच्चों का व्यक्तित्व ऐसा होता है कि जिस आदत से उन्हें रोको वही आदत उनमें पक्की हो जाती है। इसलिये प्यार-मुहब्बत से तो चाहे किसी समय बच्चे को समझा दें, परन्तु डाँट-डपट करना, लज्जित करना और उपहास करना तो किसी भी अवस्था में ठीक नहीं है। और दंड देना तो उसके साथ अन्याय करना है।

कई लोग बाएं हाथ से अधिक अच्छा काम कर सकते हैं और अधिक अच्छा लिख सकते हैं। उनका यह स्वभाव पक्का हो चुका होता है। उनका यह एक गुण है; इसे अवगुण या कमज़ोरी नहीं समझना चाहिये।

गुरदीप (जिसका वर्णन पहले आ चुका है), खब्बू है। उसका मस्तिष्क इस ढंग का बन गया है कि जो कुछ उसके माता-पिता कहते हैं, वह उसके विपरीत करता है। यदि वह दाएँ हाथ से काम करते हैं तो वह बाएँ से करेगा। परन्तु कोई भी बालक बुद्धि के साथ ऐसा व्यवहार नहीं अपनाता। उसका अचेतन मन विद्रोही हो जाता है, और इस प्रकार की बातें, जैसे खब्बू हो जाना, उसके विद्रोही मन के बाह्य चिन्ह हैं।

: १६ :

नौ-वर्षीया प्रमिला अत्यन्त समझदार माता-पिता की बेटी है। उसके माता-पिता साधारण माता-पिताओं जैसे नहीं हैं। उन्हें आपस में असीम प्रेम है और वे अपने बच्चों का बहुत प्रेम, लगन और ध्यान से पालन-पोषण करते हैं। बच्चे साफ़-सुथरे रहते हैं, स्वच्छ और सुन्दर कपड़े पहनते हैं, और नियमित समय पर खूब मन भर कर अच्छा भोजन करते हैं। माता-पिता उन्हें सैर को भी ले जाते हैं। सारांश यह कि वे बच्चों को हर तरह से प्रसन्न और सन्तुष्ट रखते हैं। बच्चों की शिक्षा-दीक्षा के सम्बन्ध में भी उनके विचार बड़े उच्च और प्रशंसनीय हैं। उनके हृदय में अपने बच्चों को अच्छा और ऊँचा बनाने की लगन है। उनके केवल तीन बच्चे हैं—दो लड़कियाँ और एक लड़का। तीनों की आयु में एक दूसरे से काफ़ी अन्तर है। प्रमिला सबसे बड़ी है।

वह अत्यन्त सुयोग्य और प्यारी लड़की है। स्कूल के सारे अध्यापक उसे चाहते हैं। यद्यपि वह कभी २ थोड़ी बहुत हठ करने लगती है, परन्तु चूँकि वह बहुत प्यारी लड़की है इसलिये उसकी हठें भी सहन कर ली जाती हैं। परम सुन्दर होने के कारण

उसकी सहेलियों ने उसका नाम 'गोरी' रखा हुआ था। परन्तु प्रमिला को यह नाम गाली-सा लगता था और यह सदा शिकायत करती रहती थी कि उसके सहपाठी लड़के और लड़कियाँ उसे छेड़ते हैं।

धीरे २ उसके सहपाठियों की उससे ठन गई। वे उसके साथ न बैठते, न बोलते और न खेलते। यह बड़े आश्चर्य की बात थी कि बच्चे इतनी प्यारी लड़की के विरुद्ध क्यों हो गए। प्रमिला नित्यप्रति शिकायत लेकर आती। कुछ बच्चों ने अपनी अध्यापिका को बताया कि "बहिन जी! प्रमिला आप को प्यारी तो लगती है, परन्तु यदि आप को उसकी बातों का पता लगे तो आप उसे कभी पसन्द न करें।"

जब छान-बीन की गई तो पता लगा कि प्रमिला 'गन्दी' बातें करती है। सारी कहानी इस प्रकार थी—

एक दिन प्रमिला अपनी श्रेणी से निचली श्रेणी के एक लड़के के साथ एक कमरे में अकेली खेल रही थी। खेलते-खेलते उन्हें एक खेल सूझा। उन्होंने अपनी जननेन्द्रियों को छू दिया। वे इस खेल को 'माँ और बाप का खेल' कहते हैं। यह खेल तो यहाँ समाप्त हो गया परन्तु इसके बाद प्रमिला ने एक दो बार पुरुष की जननेन्द्रियों के सम्बन्ध में भोलेपन में कुछ बातें कह दीं। फिर उस छोटे लड़के ने स्वयं अपने साथियों को बता दिया कि वह और प्रमिला क्या करते रहे थे।

× × ×

जब प्रमिला के पिता को इस बात का पता लगा तो वह क्रोध से लाल-पीला होने लगा। उसे रूक्न पर बहुत क्रोध आया।

एक नौ-वर्षीय लड़के और सात वर्षीया लड़की की नीयत भला और क्या हो सकती है? छोटे बच्चों में कुतूहल अधिक होता है। उनके अन्दर हर प्रकार की खोज की इच्छा होती है। वे खिलौनों को तोड़-फोड़ कर देखते हैं कि वे किस तरह चलते-फिरते हैं। कीड़े मारकर बच्चे प्रसन्न होते हैं। खिलौना-रेलगाड़ी के एञ्जिन को खोलकर देखते रहते हैं कि उसके अन्दर कौन बोल रहा है। यह एक स्वाभाविक बात है कि बच्चे हर नई वस्तु को आश्चर्य, कुतूहल और जिज्ञासा की दृष्टि से देखते हैं।

हमारे देश के बच्चों का जीवन ऐसा नहीं कि इन्हें लड़के और लड़की के शारीरिक भेद का पता न हो। हमारे गांवों में और शहर के गली-कूचों में और साधारण घरानों में छोटे २ बच्चे नितान्त नग्नावस्था में घूमते रहते हैं। छोटे बच्चों के शरीर एक दूसरे से गुप्त नहीं रहते। उन देशों में जिन्हें 'सभ्य' समझा जाता है, छोटे बच्चों का भी नंगा फिरना सभ्यता के विरुद्ध समझा जाता है। हमारे देश में भी सभ्य और 'मॉडर्न' घरों में इस बात का रिवाज चल पड़ा है और इन घरों में माता-पिता बच्चों का नंगा फिरना बुरा समझते हैं। जिन घरों में छुटपन में ही भाई-बहिनों का जीवन ऐसा हो, उस घर के बच्चे कई बार चोरी-छुप्पे एक दूसरे के शारीरिक भेद को देखने की कोशिश करते पाए गये हैं।

सभ्य देशों में रिवाज है कि बच्चे शैशवकाल से ही माता से अलग दूसरे कमरे में सोते हैं, चाहे परदा लगाकर एक कमरे को दो भागों में बाँट लिया गया हो। यह रिवाज बच्चे के व्यक्तित्व के लिए बड़ा अच्छा है। बच्चा सारी रात गहरी नींद में नहीं सोया रहता। कई बार उसकी आँख खुल जाती है। वह खटका सुन सकता है। अपने माता-पिता की चेष्टाओं को अनुभव कर सकता है। खाली बिस्तर को टटोल कर और स्वयं पहलू बदल कर देख भी सकता है। छोटे बच्चे को अपने माता-पिता के समागम का पता नहीं होता परन्तु रात के समय हिलने-जुलने के अर्थ वह अपने मानसिक स्तर के अनुसार समझ लेता है। ज्यों-ज्यों उसकी आयु बढ़ती है, वह रात के मद्धम और अपूर्ण देखे हुए नाटक का अर्थ अपनी समझ के अनुसार लगाने का प्रयत्न करता है।

हमारे समाज में छुटपन से ही लड़के और लड़की में भेद-भाव रक्खा जाता है। लड़कियाँ सदा यह अनुभव करती हैं कि लड़की होने के कारण उन्हें अधिक लाड़-प्यार प्राप्त नहीं हो सकता। उसे अपना भाई अपने से केवल एक अंग में भिन्न मालूम होता है। लड़की समझती है कि उसका वह अंग खो गया है। इसलिए उसकी उपचेतना में यह इच्छा उत्पन्न होती है कि वह खोई हुई वस्तु उसे मिल जाए।

अपने बच्चों को हम चाहे कितना ही अपनी देख-रेख में रखें हम उनके व्यक्तित्व के प्रत्येक पहलू से पूरी तरह परिचित नहीं हो

सकते। हमारी बातों का, हमारी चेष्टाओं का और हमारे कामों का उनके उपचेतन-मन पर ऐसा प्रभाव पड़ता है कि हम सोच भी नहीं सकते। घर के वातावरण के अतिरिक्त उनके साथी, उनके पड़ौसी-पड़ौसी, घर के नौकर-चाकर, स्कूल के सहपाठी, सिनेमा, रेडियो आदि का प्रभाव बच्चे के मन पर बहुत गहरा पड़ता है। इन सब वस्तुओं पर भला हम कैसे क़ाबू रख सकते हैं ?

इसी कारण नवीन शिक्षा-प्रणाली में इस बात पर बहुत ज़ोर दिया गया है कि पुस्तकों की शिक्षा के साथ-साथ व्यक्तित्व का शिक्षण भी होना चाहिये। बच्चे के व्यक्तित्व पर जिन २ बातों का प्रभाव अब या भविष्य में पड़ना है उन सब की उचित नींव उसके प्रारम्भिक वर्षों में ही रखी जानी चाहिए। स्त्री और पुरुष का अन्तर, उनके अलग २ काम और बच्चे की उत्पत्ति ऐसे विषय हैं जिनके सम्बन्ध में बच्चे अपनी भिन्न २ आयु में सोचते हैं, पूछ-ताछ करते हैं, और सचाई की तह तक पहुँचने की कोशिश करते हैं। बच्चों को झूठी, बनावटी और मनघड़ंत बातों का इधर-उधर से पता लगता रहे, इसकी अपेक्षा, नवीन शिक्षा-प्रणाली के सिद्धान्त के अनुसार, यह अधिक अच्छा है कि माता-पिता और अध्यापक मिलकर बच्चे का वैज्ञानिक तथा मनोवैज्ञानिक ढंग से ठीक-ठीक पथ-प्रदर्शन करें।

× × ×

प्रमिला के बारे में क्या बात हो सकती है ?

भोलेपन में दो बालक एक दूसरे के शारीरिक भेद की खोज

करना चाहते हैं। या सुनी-सुनाई और काल्पनिक बातों के आधार पर वे कुछ करना चाहते हैं—वह जो उनकी समझ में उनके माता-पिता करते हैं। (वास्तव में उन्हें कुछ भी पता नहीं कि उनके माता-पिता क्या करते हैं। उनके छोटे-छोटे दिलों में कई छोटे छोटे विचार हैं।) या अपने स्कूल के बड़े लड़कों और लड़कियों के सम्बन्ध में उन्होंने कुछ सुन रखा है जिसका अर्थ तो वे समझते नहीं परन्तु वे अपनी समझ के अनुसार पता लगाने का प्रयत्न करते हैं। या उनके नौकर ने कोई इस प्रकार की बात की है। सहस्रों प्रकार की बातें हैं जो बच्चे के भोले-भाले मन पर प्रभाव डाल सकती हैं।

प्रमिला अपने माता-पिता की पहली सन्तान है। चार-पाँच वर्ष तक उसे अपने माता-पिता का सारा लाड़-प्यार मिलता रहा है। जब से उसके भाई हुआ है उस भाई का लाड़ अधिक होने लगा है। आखिर उस में और भाई में अन्तर क्या है ?

यह है सारा मानसिक वातावरण जिसको समझ कर प्रमिला के मामले पर विचार किया जाना चाहिए। दंड देकर हम उसे कैसे सुधार सकते हैं ? दंड से हम उस की जिज्ञासा की भावना को उसके कोमल, निर्दोष और शुद्ध हृदय के अन्दर दबा देंगे। ये दबी हुई और अपूर्ण इच्छाएँ उसके उपचेतन मन का अङ्ग बन जाती हैं और बड़े होने पर ये किसी और रूप में प्रकट होने लगती हैं।

प्रमिला और उसके साथी से यदि आप प्यार से पूछेंगे तो

वे सब कुछ बता देंगे—क्योंकि उनके मन के अन्दर 'पाप' नहीं है। फिर देखना चाहिये कि उन्हें किस प्रकार के प्रशिक्षण या शिक्षा की आवश्यकता है। मनोवैज्ञानिक ढंग से उन्हें समझाएँ। परन्तु यदि हम ने उन्हें झिड़क कर, घूर कर या घबरा कर पूछा तो हम बच्चे के हृदय के अन्दर झाँक नहीं सकेंगे। यदि बच्चे को इस बात का अनुभव कराया जाय कि जो कुछ उसने किया है वह बड़ा भारी 'पाप' है, तो हम निर्दोष खेल या जिज्ञासा को बिना बात पाप बना कर बच्चे को 'पापी' बना देंगे। उसका कोमल हृदय पाप के बोझ के नीचे दब जायगा और फिर उसे उठाना हमारे लिये कठिन हो जायगा।

× × ×

आठ-नौ वर्ष के असरार और शरीफ़ दोनों एक दिन 'माँ-बाप का खेल' खेल रहे थे। किसी बच्चे ने उन्हें देखकर शोर मचा दिया। सब बच्चों में चर्चा होने लगा। शरीफ़ और असरार डर के मारे छुपते फिरते थे। आखिर रोते-धोते कोठे पर जा छुपे। उन्हें 'पाप' की अनुभूति हो गई और वे अपने आप को 'पापी' समझ कर दूसरों के सामने आने से घबराने लगे। दूसरे बच्चों को परे हटाकर और मना करके शरीफ़ और असरार को प्यार-दिलासा देकर नीचे लाया गया और इस सम्बन्ध में उन से कोई बात ही नहीं की गई।

कुछ दिनों के बाद शरीफ़ और असरार ने अवसर मिलने पर मास्टर से स्वयं बातचीत की। पता लगा कि शरीफ़ को उसके किसी

मित्र ने यह खेल सिखाया था। असग़र ने कि
को यह खेल खेलते देखा था। फिर उसने अपने
के साथ यह खेल खेलने का प्रयत्न किया था,
बाप ने उसे बहुत मारा था। इसीलिये उसके ब
से हटाकर असग़र को इस स्कूल में भेज दिया था

शरीफ़ को हर घड़ी कोई न कोई छेड़ता रह
उसे तंग करते हैं। उसके मन पर पाप की अनुभूति
बढ़ गया है कि उसे हर समय यही लगता है मानों
केवल उसी के सम्बन्ध में बातें कर रहे हैं। वह ड
और हर समय सहमा हुआ-सा रहता है—यहां तक
सोते-सोते कपकपी के साथ उठ बैठता है। वह
लड़का बन गया है—आश्चर्य-चकित सी आँखें, बिख
ध्यान। किसी स्थान पर वह आराम से नहीं बैठ सकता
लड़के को मित्र नहीं बना सकता। जिसके पास जाता है
सोचता है उसे उसकी बात का पता है। आखिर रोता हुआ
ी के पास जाता है और रोकर कहता है, "मुझ से लड़के
ानी करते हैं। मैं घर जाना चाहता हूँ।"

× × ×

बारह-वर्षीय सुरजीत ने आठ-वर्षीय पिशावरी लाल के स
'काम' करने का प्रयत्न किया। किसी नौकर ने देख लिया
ई कर दी गई। बच्चों में, नौकरों

हम इसे 'बुरा काम' कहते हैं, परन्तु वास्तव में देखा जाये तो इस प्रकार की घटना का कुछ और ही अर्थ होता है। हम इसका जो अर्थ समझ लेते हैं वह बच्चे के व्यक्तित्व के लिये बहुत हानिकारक होता है।

× × ×

तेरह-चौदह वर्ष की आयु के खुशवन्त, योगेन्द्र, अमृत और लोकनाथ चारों की आपस में बड़ी गहरी मित्रता थी। सब लंगोटिये मित्र थे। हर समय इकट्ठे रहते थे और हर बात में एक दूसरे की हिमायत करते थे। इन चारों को हस्तमैथुन की आदत थी। चारों मुक़ाबला करके यह काम करते थे। उसका नाम उन्होंने 'महामालिश' रखा हुआ था। खुशवन्त ने अपने किसी मित्र से यह काम सीखा था। उसने अपने दूसरे मित्रों को यह चाट लगा दी। उनमें से एक शौचालय के बाहर खड़ा हो जाता और दूसरा अन्दर जाकर यह काम करता।

× × ×

प्रमिला की बात, शरीफ और असरार की बात, सरजीत और पिशावरीलाल की बात और इन चारों मित्रों की बात—ये सब एक ही रोग के चिन्ह हैं। परन्तु संरक्षकों को इन बातों से घबराना नहीं चाहिए। साधारणतया माता-पिता और अध्यापक ऐसे अवसरों पर बड़ा कठोर दंड देने के पक्ष में होते हैं। परन्तु यह विधि ठीक नहीं है।

इस प्रकार की प्रत्येक बात की वास्तविकता की पूरी तरह

जाँच करनी चाहिये। बच्चे के मन में अपने प्रति विश्वास और भरोसा उत्पन्न करायें। उसके हृदय के अन्दर झांकें और देखें कि इस बात की तह में क्या है—छान-बीन करने की भावना है या कोई गलत प्रशिक्षण है।

ऐसे अवसरों पर बच्चों को ठीक ढंग की जिन्सी शिक्षा देनी चाहिये। जब कभी ऐसा अवसर प्राप्त हो, उसे बच्चे को वैज्ञानिक ढंग से जिन्सी शिक्षा देने के काम में लाएं। जिन्स एक ऐसा विषय है कि इसका सम्बन्ध जीवन के प्रत्येक पहलू से है। इस विषय को 'गंदा' कह कर हमने उसे गुप्त और रहस्यपूर्ण बना दिया है और इसे अन्धकार के पर्दे के पीछे छुपा दिया है। इसका परिणाम यह होता है कि बच्चों को दूसरे साधनों के द्वारा य शिक्षा मिलती रहती है। माता-पिता और अध्यापकों का कर्व है कि वे बच्चे के व्यक्तित्व के इस पहलू के प्रति उदासीन न हों इस विषय पर बहुत सा उच्च कोटि का साहित्य उपलब्ध है। इस का लाभ उठाना चाहिए। परन्तु सब से पहले यह बात अनिवार्य है कि हम अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन लाएं, और व्यवहार को बदलें। हमें खूब अध्ययन करना चाहिए और सोचना चाहिए। तभी हम अपने बच्चों को ठीक प्रकार की और वैज्ञानिक ढंग से जिन्सी शिक्षा दे सकेंगे।

: १७ :

बारह-वर्षीय हरचरन माता-पिता का इकलौता पुत्र है। उसके तीन बहनें हैं जो उससे बड़ी हैं। छोटी आयु में उसे बार-बार नमूनिया, टाइफाइड इत्यादि कई भयंकर और लम्बी बीमारियां होती रही हैं। इसी कारण से वह छुटपन से ही बहुत दुबला-पतला है।

सात वर्ष की आयु में उसे दोबारा टाइफाइड हो गया। इस बार उसे चार-पांच महीने तक बिस्तर में पड़े रहना पड़ा। इस बीमारी में वह सूख कर काँटा हो गया। आठ वर्ष की आयु में उसने अन्य बच्चों की भांति खेलना-कूदना और दौड़ना-भागना शुरू किया। वह हर प्रकार के खेलों में बड़े चाव से भाग लिया करता था। परन्तु खाने-पीने के प्रति वह नितान्त उदासीन था। मन में आया कुछ खा लिया, नहीं तो लाख मिन्नतें करो, वह एक कौर भी न लेगा। किसी वस्तु के लिये उसने कभी हठ नहीं की। न कोई विशेष वस्तु खाने का उसे चाव था। और न ही कोई वस्तु स्वयं मांग कर खाता था। बस अपने साथियों के साथ आ कर खाना खा लिया करता था। उसके साथी भले ही कि

जाँच करनी चाहिये। बच्चे के मन में अपने प्रति विश्वास
भरोसा उत्पन्न कराएं। उसके हृदय के अन्दर झांकें और देखें
इस बात की तह में क्या है—छान-बीन करने की भावना है
कोई ग़लत प्रशिक्षण है।

ऐसे अवसरों पर बच्चों को ठीक ढंग की जिन्सी शिक्षा देनी
चाहिये। जब कभी ऐसा अवसर प्राप्त हो, उसे बच्चे को वैज्ञानिक
ढंग से जिन्सी शिक्षा देने के काम में लाएं। जिन्स एक ऐसा
विषय है कि इसका सम्बन्ध जीवन के प्रत्येक पहलू से है। इस
विषय को 'गंदा' कह कर हमने उसे गुप्त और रहस्यपूर्ण
दिया है और इसे अन्धकार के पर्दे के पीछे छुपा दिया है।
परिणाम यह होता है कि बच्चों को दूसरे साधनों के द्वारा
शिक्षा मिलती रहती है। माता-पिता और अध्यापकों का कर्त
है कि वे बच्चे के व्यक्तित्व के इस पहलू के प्रति उदासीन न हों
इस विषय पर बहुत सा उच्च कोटि का साहित्य उपलब्ध है। इस
का लाभ उठाना चाहिए। परन्तु सब से पहले यह बात अनिवार्य
है कि हम अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन लाएं, और व्यवहार को
बदलें। हमें खूब अध्ययन करना चाहिए और सोचना चाहिए।
तभी हम अपने बच्चों को ठीक प्रकार की और वैज्ञानिक ढंग से
जिन्सी शिक्षा दे सकेंगे।

साथ खेलने वाले मित्र उसे नहीं मिलते। सब उसे छेड़ते हैं। उन्होंने उसके कई नाम रखे हुए हैं। इन सब बातों के कारण वह बहुत कठिनाई अनुभव करता है। इन्हीं कारणों से वह किसी भी स्कूल में नहीं पढ़ सकता।

उसे अन्ततः एक नए स्कूल में प्रविष्ट कराया गया। वहां उसे किसी विशेष कक्षा में नहीं बिठाया गया और न ही पढ़ाई पर जोर दिया गया। अकरम के मास्टर ने उसके दूसरे चाव देखने आरम्भ किये। वह उसे अकेले ही को पढ़ाया और खेल खिलाया करता था। धीरे २ अकरम ने कई खेल खेलने शुरू कर दिये। ईंटों और गारा को लेकर घरौंदे बनाने का उसे बहुत चाव हो गया। फिर वह बढ़ई का भी काम करने लगा। वह दिन में दो तीन घंटे बढ़ई का काम करता। उसका हाथ इतना साफ हो गया कि वह बहुत सुन्दर खिलौने बनाने लगा। उसे एक बार बच्चों के बनाए हुए खिलौनों की प्रदर्शिनी में पुरस्कार भी मिला। कुछ समय बाद अकरम ड्राइंग भी बहुत अच्छी करने लगा। उसके मन में स्वतः कोई विचार आ जाता और वह उसकी ड्राइंग बनाने लगता। उसे एक 'मिकैनो' ला दिया गया। उसका भी उसे चाव हो गया। अध्यापक और अकरम सारा दिन इसी में लगे रहते। कभी मिकैनो, कभी बढ़ई का काम, कभी घरौंदे और कभी ड्राइंग—इन सब बातों के कारण उसे अपना अध्यापक अच्छा लगने लगा। फिर धीरे २ उसने अध्यापक से पढ़ना भी आरम्भ कर दिया। उसने अध्यापक से स्वयं कहा कि मुझे उर्दू पढ़ाएं, और साथ ही

गणित भी पढ़ाएं। नित्यप्रति का प्रोग्राम बनाया गया। अकरम सवेरे आता और स्वयं कहता, आज पहली घंटी में ड्राइंग करना है, दूसरी में गणित इत्यादि। अकरम का टाइम-टेबल भी स्कूल की घंटियों के अनुसार चलता था। परन्तु अभी वह अकेला ही पढ़ता था। यद्यपि वह दस वर्ष का हो गया था, परन्तु उसकी पढ़ाई पहली कक्षा की ही हो रही थी। इसकी प्रगति भी बहुत धीमी थी। परन्तु उसकी रुचि तीव्र थी। जब कभी उसका अध्यापक बीमार पड़ जाता या कहीं बाहर चला जाता तो अकरम बहुत उदास हो जाता।

पाँच छः महीने तक अकरम इस अध्यापक से पढ़ता रहा। वह घर में अपनी मां के पास रहता था। बड़ा लड़का होने के कारण उसका घर पर रोब था। उसके छोटे भाई-बहिन उसकी अपेक्षा अधिक कुशाग्र-बुद्धि थे, परन्तु घर पर उसे कोई कुछ नहीं कहता था।

अकरम की मां को एक बार लम्बी अवधि के लिये कहीं बाहर जाना पड़ा। उस समय अकरम को बोर्डिंग-हाउस में प्रविष्ट कर दिया गया। बोर्डिंग के सुपरिन्टेन्डेन्ट को उसके सम्बन्ध में विशेष रूप से कई हिदायतें दी गईं। परन्तु अकरम बोर्डिंग में प्रसन्न चित्त न रहता था। लड़के उसे छेड़ने से न चूकते, इसलिये वा भी उदास हो जाता। घर में उसकी हकूमत थी। परन्तु बोर्डिंग में वह अपने आप को घटिया महसूस करता, उसकी आयु के अन्य बच्चे उससे बहुत आगे थे। वह सब से पीछे था—न केवल

पढ़ाई-लिखाई में, वरन् रहन-सहन में, समझ-बूझ में तथा अन्य सब बातों में। अकरम की खेलों में रुचि भी घट गई। अब वह पढ़ाई भी न करता और न घरौंदे बनाने अथवा बढ़ई का काम करने में रुचि प्रकट करता। कुछ दिनों के बाद वह बीमार सा रहने लगा। कभी सिर में दर्द, कभी कुछ और कभी कुछ। उसका मन उद्विग्न और अशान्त रहने लगा। अकरम का बाप निराश हो गया। वह कहता "अकरम की ओर अब पूरा ध्यान नहीं दिया जा रहा है। उसका अध्यापक उससे काम नहीं कराता और न ही उसे कुछ पढ़ाता-लिखाता है।"

अकरम जन्मकाल से ही दूसरे बच्चों से पीछे था। उसकी बौद्धिक दुर्बलताओं के लिये उसके माता-पिता ही जिम्मेदार नहीं हैं। वह अपनी आयु के बच्चों से हर तरह पीछे है।

× × ×

हरचरन की बचपन की बीमारियों ने उसे यह कुछ बनाया। उसकी शारीरिक दुर्बलताएं उन लम्बी बीमारियों के कारण हैं। और इन्हीं बीमारियों और शारीरिक दुर्बलताओं के कारण उसका बौद्धिक विकास इतना पीछे रह गया। उसकी समझ कम है। पढ़ाई में इसीलिये वह उन्नति नहीं करता। पांच वर्ष के बच्चों के से चाव (परेड करने के, कहानियां सुनने के इत्यादि) उसमें बारह वर्ष की आयु में उत्पन्न हुए हैं। बौद्धिक तौर पर वह सात वर्ष पीछे है अर्थात् उसकी शारीरिक आयु बारह वर्ष की है और बौद्धिक आयु पांच वर्ष की है। यही अवस्था अकरम की है—

यद्यपि उसकी दुर्बलता जन्मजात है।

इस प्रकार के बच्चों की शिक्षा-दीक्षा का प्रबंध नितान्त भिन्न प्रकार का होना चाहिए। ये बच्चे साधारण स्कूलों में नहीं पढ़ सकते, क्योंकि ये अपनी आयु के अनुसार प्रगति नहीं कर सकते। अपनी योग्यता, समझ एवं बुद्धि के अनुसार जिस श्रेणी में वे चल सकते हैं उस में दूसरे बच्चे आयु में इनसे बहुत छोटे होते हैं। ये उनकी तुलना में अपने आप को बहुत तुच्छ समझने लगते हैं। और वे भी इन्हें हर घड़ी छेड़ते रहते हैं। चंचल और होशियार बच्चे रोकने पर भी नहीं रुकते। इस प्रकार का वातावरण बौद्धिक तौर पर दुर्बल बच्चों के लिये बहुत हानिकारक होता है। वे हर घड़ी घुटे-घुटे से और दबे-दबे से रहते हैं।

हर अध्यापक भी इस प्रकार के बच्चों को नहीं पढ़ा सकता। इन बच्चों के साथ बहुत मग़ज-पच्ची करने की आवश्यकता होती है, और अध्यापक को स्वयं भी बहुत परिश्रम करना पड़ता है। ऐसे बच्चों के लिए पुस्तकें भी भिन्न प्रकार की होनी चाहिएँ, और पाठ्य विषय भी इनकी रुचि के अनुसार होने चाहिएँ। जिस ओर इनकी रुचि हो वही काम इन से कराना चाहिए। यदि इनकी रुचि कहानियों में हो तो इनकी शिक्षा कहानियों के द्वारा प्रारम्भ करानी चाहिये। यदि इन्हें दस्तकारी का चाव हो (जो इस प्रकार के बच्चों को प्रायः होता है) तो इन्हें दस्तकारी सिखायें और दस्तकारी के द्वारा इन्हें पढ़ाएँ। ऐसे बच्चे दस्तकारियों में बड़ी दक्षता प्राप्त कर लेते हैं। इनको खेल-कूद का भी बड़ा चाव होता

है। ड्राइंग और चित्रकारी में भी ये बड़ी दिलचस्पी लेते हैं। पुस्तकीय गणित बच्चे कठिनाई से सीख पाते हैं। दैनिक जीवन से सम्बन्ध रखने वाला हिसाब इनके लिये अधिक लाभप्रद होगा। इन्हें स्वयं खान-पान, फल, दूध, कपड़ा, टिकट इत्यादि खरीदने के अवसर दें और साथ ही साथ समझाएँ। जिस विषय में या जिस काम में और जिस ढंग से ये ठीक चलते मालूम न हों वह तुरन्त छोड़ दें या बदल दें। सफलता के आश्वासन से ये सफलता की सीढ़ी पर अधिक वेग से चढ़ सकेंगे। असफलता के अनुभव से इनकी गति रुक जाती है। इनके अन्दर क्षुद्रता की भावना कम करने की आवश्यकता है। जिस समाज में ये उत्पन्न होते हैं और बढ़ते हैं वह इनके साथ पूरा न्याय नहीं कर सकता। घर में भाई बहिन और अन्य सम्बंधी परिहास और व्यंग से इन्हें और भी दुखी बना देते हैं। बहनों-भाइयों का सहयोग तो प्राप्त भी किया जा सकता है, परन्तु साधारण स्कूलों में अन्य विद्यार्थी इन्हें चैन नहीं लेने देते और न ही आगे बढ़ने का अवसर देते हैं। इस प्रकार के बच्चों के लिए शिक्षा-संस्थाएँ भी अलग और भिन्न प्रकार की होनी चाहिएँ, जहाँ वे अपने आप को तुच्छ और कम समझने के स्थान पर दूसरों के साथ समता और साझे का अनुभव कर सकें। साधारण स्कूल के अध्यापक न तो इन बच्चों की कठिनाइयों को समझ सकते हैं और न ही इनकी ओर समुचित ध्यान दे सकते हैं।

इस प्रकार के बच्चों के माता-पिता भी आसानी से यह बात

स्वीकार नहीं करते कि इनका बच्चा बौद्धिक तौर पर अन्य बच्चों से पीछे है। वे अपने बच्चों के पिछड़ने में अध्यापकों और स्कूल का दोष समझते रहते हैं। माता-पिता को अपने बच्चों के बौद्धिक विकास और दुर्बलताओं का ध्यान रख कर उनकी शिक्षा का उचित प्रबंध करना चाहिए।

नौ वर्ष की आयु का बसन्त बहुत गन्दा रहता है
मल-मूत्र कपड़ों ही में निकल आता है, और कपड़े म
कीचड़ से लिपड़े रहते हैं। हर समय गन्दा रहने के कारण
हाथ-पांव काले पड़ गए हैं। उसके शरीर में से इतनी दु
आती है कि कोई भला आदमी उसे अपने पास खड़ा नहीं
देता।

यह खाता भी बेहद है। दो सेर दूध हर रोज पीता है।
समय में चार रोटियां खाता है। फल और मिठाई का को
परिमाण नहीं। सारा दिन पशुओं की भांति चरता रहता है
फिर भी उसकी तृप्ति नहीं होती। बसन्त को स्कूल भेजा गया,
परन्तु उसे न तो अध्यापक अपने पास आने देते और न उसके
सहपाठी। उसे दो-तीन स्कूलों में बदल-बदल कर प्रविष्ट कराया
गया परन्तु कहीं भी उसने पढ़ाई में उन्नति नहीं की। बसन्त की
आंखें बहुत मोटी-मोटी हैं। वह फटी-फटी सी आंखों से देखता
रहता है और सारा दिन इधर-उधर घूमता रहता है। एक क्षण
के लिये भी उसका ध्यान किसी बात पर केन्द्रित नहीं होता।

बातें भी इधर-उधर की करता रहता है, जिनका न सिर होता है, न पैर। इसका चलने और दौड़ने का ढंग भी विचित्र सा है। सारांश यह कि बिखरे बाल, फटी सी आंखें, दुर्गन्धपूर्ण शरीर, खाने-पीने की पाशविक आदतें देखकर हर व्यक्ति उससे घृणा करता है और उसे पागल कहता है। यहां तक कि उसका नाम ही 'पागल बसन्त' पड़ गया है।

बसन्त को कुत्तों और बिल्लियों के साथ बहुत प्रेम है। वैसे वह सारे पशुओं को प्यार करता है। वह गाय-भैंसों के पीछे २ भागता है, गधों के ऊपर सवार हो जाता है और बकरियां अपने साथ लिये २ फिरता है।

उसका बाप बहुत धनाढ्य है। वह अपने पुत्र को बहुत अच्छी *शिक्षा देना चाहता है। इसलिये वह बसन्त को देश के कई* अच्छे २ स्कूलों में ले कर गया—चीफ कालिजों में, कॉन्वेन्ट स्कूलों में और अन्य कई बढ़िया स्कूलों में। परन्तु प्रत्येक स्कूल ने उसे गन्दा या पागल कह कर वापिस कर दिया।

बसन्त अभी कुछ महीनों का ही हुआ था कि उसकी माँ मर गई थी। उसके बाप ने दूसरा विवाह कर लिया। बसन्त छुटपन में ही नौकरों के सुपुर्द हो गया। उसकी दादी या मौसी उसे अपने पास तक न आने देतीं। यदि वह अन्दर आ भी जाता तो उसे खाने की कोई वस्तु देकर बाहर भेज दिया जाता। बसन्त सारा दिन अपने बाप की जमींदारी में नौकरों-चाकरों के साथ घूमता रहता। खेती-बाड़ी, फसलों और पशुओं के सम्बन्ध में उसे कई

... का ज्ञान हो गया। परन्तु इस ढंग
उसका रहन-सहन अच्छा न बन सका। उस
उसके बालपन ही में बन गई थी।

इस प्रकार के बच्चों को देखकर कई बार
है कि शायद वे जन्म से ही 'पागल' या बौद्धिक
परन्तु वसन्त ऐसा नहीं था। उसे घर से बाहर
भिन्न प्रकार के वातावरण में रखा गया, जहां न
थे, न नौकर। वहां भी उसका नाम 'पागल' ही
उसके कुछ प्रिय मित्रों ने उसकी सहायता की,
किया, सहानुभूति प्रदान की। उनकी देखा-देखी उस
रहने लगा। दूसरों बच्चों को निक्कर व क़मीज़ पहने
भी क़मीज़ व निक्कर पहनने लगा। उसकी आंखों की
गई और वह कम 'पागल' दिखाई देने लगा। वह अप
सम्बन्ध में लम्बी-लम्बी कहानियां सुनाने लगा। कोई नव
उसे देखकर यह नहीं कह सकता था कि उसे कभी कोई
थी। थोड़े दिनों के पश्चात् उसके पिता, दादी और दादा
और उसे देखकर बड़े विस्मित हुए। कहां तो घर पर उसे र
से जकड़ कर रखा जाता था, और कहां अब वह इस नए वा
वरण में नितान्त स्वाधीन रहने लगा था। फिर भी उस की खा
पीने की आदत वैसी ही रही। अधिक खाने से उसे अपच
जाती थी। इसलिये उसका शरीर
रोग की ...

इस नए वातावरण में एक नए ढंग का स्कूल भी था। बसन्त अपने आप उस स्कूल में चला जाता। कभी किसी श्रेणी में जा बैठता और कभी किसी में। उसे कोई रोक-टोक नहीं थी। प्राइमरी की एक अध्यापिका उसे बहुत अच्छी लगने लगी। वह उसकी श्रेणी में जा बैठता। धीरे २ इस श्रेणी के साथ उसने पढ़ना भी प्रारम्भ कर दिया। अब वह नियमित रूप से कक्षा में बैठने लगा। यद्यपि बच्चे उसे तंग करते और वह भी उन्हें मारता-पीटता, परन्तु वह अध्यापिका बड़ी चतुरतापूर्वक दोनों दलों का समझौता करा देती। इसी प्रकार बसन्त में बहुत से परिवर्तन आ गए और वह पढ़ने-लिखने में भी काफी चल निकला।

बचपन में बच्चे के प्रति उदासीनता और उसका तिरस्कार उसे निरर्थक बना देता है—यहां तक कि लोग उसे 'पागल' समझने लगते हैं। इस प्रकार की परिस्थिति में बच्चे का वातावरण बदल देना बहुत आवश्यक होता है। परन्तु उससे भी अधिक आवश्यक यह है कि उसे सहानुभूतिपूर्ण हाथों में सौंपा जाए। मनोविज्ञान के जानने वाले अध्यापक ही उसको कुछ सुधार सकते हैं।

: १६ :

जन्म-जात दोषों में से एक और दोष जो कई बच्चों में देखा जाता है, बहरापन और गूंगापन है। बहरे बच्चे गूंगे भी अवश्य होते हैं। चूंकि ये सुन नहीं सकते इसलिये बोलना भी नहीं सीख सकते। इनके कानों और गले की मशीन अन्दर से साधारणतया ठीक होती है, परन्तु न तो ये सुन सकते हैं और न बोल सकते हैं। वास्तव में इनके मस्तिष्क की ग्रन्थियों में दोष होता है। इस दोष का माता-पिता को साधारणतया शीघ्र पता नहीं लगता। ता-ता, मा-मा, दा-दा आदि शब्द बच्चे बोला ही करते हैं। ये रो भी लेते हैं। इसलिये छोटी आयु में बच्चे साधारण लगते हैं। जब ये बातें नहीं करते तो माता-पिता सोचते हैं कि कई बच्चे यूं ही देर में बोलना सीखते हैं। कई बच्चे देर से चलना और देर से बोलना सीखते हैं। वैसे इन में कोई दोष नहीं होता। परन्तु जब चार-पाँच वर्ष तक बच्चा नहीं बोलता तब [illegible] से सन्देह होने लगता है कि कहीं बच्चे में कोई [illegible] न हो।

ऐसे बालक भी पढ़ना-लिखना सीख सकते हैं। वे भी कुछ बन सकते हैं। परन्तु उनकी शिक्षा और ही प्रणाली से होती है। वे आँखों और होंटों की हरकत से बहुत कुछ सीख सकते हैं। प्रारम्भ में इनकी अँगुलियाँ बोलने वाले के गले पर रख कर उन्हें बोलने वाली मशीनरी का प्रयोग समझाया जाता है। फिर वे भी इसी तरह अपने बोलने वाले अंगों का प्रयोग करने लगते हैं। परन्तु इसके लिये बहुत परिश्रम, उचित साधनों तथा विशिष्ट प्रणाली की आवश्यकता है। हर कोई व्यक्ति इनको नहीं पढ़ा सकता। इस काम में जो लोग दक्ष हैं वही इसे कर सकते हैं। उन्नत देशों में ऐसे बच्चों की शिक्षा के लिये विशेष प्रकार की संस्थाएँ होती हैं। भारत में भी अब इस ढंग की कई संस्थाएं खुल गई हैं।

× × ×

इन्द्र एक पंजाबी लड़का है। इसके पिता बर्मा में नौकरी करते थे। इन्द्र पैदायशी गूंगा और बहरा था। पाँच-छः वर्ष की आयु में उसे रंगून के एक इसी प्रकार के स्कूल में प्रविष्ट करा दिया गया। वह पिछले महायुद्ध में बर्मा खाली होने तक सात वर्ष की अवधि तक उस स्कूल में पढ़ता रहा। अब वह पंजाब में वापस आया है। वह अच्छी उन्नति कर चुका है। उसकी आयु तेरह वर्ष की है। अंग्रेजी और चित्रकारी में उसे बहुत रुचि है और इन में उसने काफी प्रगति की है। वह दस्तकारी के कई अन्य काम भी करता है। इसके कपड़ों व चाल-ढाल से यह सन्देह नहीं

होता कि यह गूंगा और बहरा है। वह अपनी आ
बच्चों की भाँति सुन्दर, स्वच्छ वस्त्र धारण करता है
चलता-फिरता और उठता-बैठता है। वह ताश भी खेल

पंजाब में आकर उसे गुरमुखी पढ़ने का चाव
दिनों में ही वह वर्णमाला सीख गया। धीरे-धीरे वह
छोटी पुस्तकें स्वयं पढ़ने लगा।

वह पढ़ कर सुनाता है—यद्यपि उसके गले में से
सी मोटी-मोटी आवाज निकलती है, परन्तु बात स
जाती है। इसी प्रकार वह अंग्रेजी भी एक विचित्र
में बोलता है। इसका एक कारण यह हो सकता है
गला शैशवकाल में बहुत दिनों तक प्रयोग में नहीं आ
वाली मशीनरी के पट्ठे कई वर्ष तक प्रयोग में न आने
उसकी आवाज ऐसी भद्दी और मोटी-सी हो गई है।

घर में इन्द्र के संकेत और उसकी बातें उसके स
बहुत समझ लेते हैं। वह पंजाबी, बर्मी और अंग्रेजी
बहुत बातें कर लेता है—यद्यपि बोलने का ढंग कुछ
होता है। वह बहुत प्यार करने वाला बच्चा है।

× × ×

उन बच्चों की शिक्षा का भी प्रबन्ध हो सकता है जो
अन्धे हों या बाल्यावस्था में आँखें खो बैठें। भारतवर्ष
...के बच्चों की शिक्षा के लिये कई विद्यालय हैं।

विज्ञान ने समस्त मानव कठिनाइयों का हल निकालने का प्रयत्न किया है। हर समझदार मां-बाप का कर्तव्य है कि वह अपने बच्चे को मानव-समाज का एक लाभप्रद अङ्ग बनाए और उसके व्यक्तित्व के विकास के लिये पूरे अवसर जुटाए।

समझदार और योग्य सन्तान पर माता-पिता गर्व कर सकेंगे। बचपन में उन पर की गई मेहनत उन्हें सन्तोष और आनन्द प्रदान करेगी। बच्चा एक उत्तरदायित्व है, खिलौना या दिल-बहलावा नहीं है। जो माता-पिता इस उत्तरदायित्व को पूरी मेहनत और समझदारी से पूरा करेंगे उनके बच्चे हर तरह से सुन्दर, स्वस्थ, योग्य, सुघड़ और शिष्ट बनेंगे।

खवचू गुरदीप भी अपने माता-पिता के कारण ही खवचू बना।

बुरी आदतों वाले और गन्दी बातें करने वाले प्रमिला, असरार, शरीफ़, सुखवन्त, अमृत, लोकनाथ और सरजीत आदि सब अपने घर के और बाहर के वातावरण की उपज हैं।

हरचरण की बचपन की भयानक बीमारियों ने उसे बौद्धिक और शारीरिक तौर पर दूसरे बच्चों से पीछे कर दिया है।

अकरम जन्म से ही बौद्धिक क्षेत्र में दूसरे बच्चों से पीछे है।

बसन्त के दयनीय बाल्य-काल ने उसे दूसरों की दृष्टि में पागल बना दिया।

× × ×

इस में दोष किसका है ? बच्चों की तकलीफों और उलझनों के लिये ज़िम्मेदार कौन है ? हमारा उत्तर है कि माता-पिता, नाना-नानी, दादा-दादी, सम्बन्धी, आस-पड़ोस में रहने वाले—ये सभी इन उलझनों और गड़बड़ के लिये उत्तरदायी हैं। हम स्वयं बच्चों के व्यक्तित्व को ऐसा-वैसा बना देते हैं और फिर बाद में अफ़सोस करते हैं और कहते हैं कि "यह बच्चे के पिछले जन्म के कर्मों का फल है।" परन्तु वास्तव में यह सब हमारे अपने कर्मों का फल होता है और इसी जन्म के कर्मों का।

सच बात यह है कि हम मां बाप बनने के योग्य नहीं हैं। अपने इस महान् उत्तरदायित्व को समझा ही नहीं, और अपने को उसे पूरा करने के योग्य बनाया।

हम अपने बच्चों को अपने ही सांचों में क्यों ढालें ? हो सकता है हमारा प्रोग्राम उनके लिये गलत हो। हम जो कुछ उन्हें बनाना चाहते हैं, शायद वे उसके योग्य ही न हों।

हम बच्चों के सम्बन्ध में जितनी चिन्ता करते रहते हैं उनके वैज्ञानिक और मनोवैज्ञानिक पालन-पोषण पर यदि उसके चौथे भाग के बराबर भी परिश्रम करें तो निःसन्देह बच्चे अपेक्षाकृत बहुत अच्छे बन सकते हैं, और हमें अधिक सन्तोष और आनन्द प्राप्त हो सकता है।

बच्चे का व्यक्तित्व बिजली के बटन के इशारे पर काम नहीं करता। ऐसा नहीं होता कि जो बटन दबाएं उसी का सम्बन्ध जल उठे या पंखा चलने लग जाए या मशीन चलने लग जाए। प्रत्येक बच्चे का व्यक्तित्व अलग २ होता है। एक ही परिस्थिति दो बच्चों पर अलग २ प्रभाव डालती है।

इसी प्रकार बच्चे की प्रत्येक कठिनाई, कष्ट और उलझन उसके व्यक्तित्व के साथ गहरा संबंध रखती है। इन कठिनाइयों और उलझनों का हल उसके विशिष्ट व्यक्तित्व के अनुसार होना चाहिये। बच्चों की मानसिक उलझनें मलेरिया ज्वर की भांति नहीं हैं कि प्रत्येक रोगी को कुनीन देने से काम हो जाए। चोरी करने वाले या हठ करने वाले या किसी अन्य रोग से ग्रसे हुए बच्चे एक ही इलाज के द्वारा ठीक नहीं हो सकते। दोनों का इलाज अलग २ होगा। रोग के ठीक २ कारण का पता बच्चे के

जीवन के इतिहास का पूरा २ पता लगाने पर ही इलाज का निश्चय हो सकता है।

ये उलझनें औषधियों से दूर नहीं होतीं। सच तो यह है कि इन उलझनों और रोगों के मूल स्रोत उन बच्चों के माता-पिता, कुटुम्बी और अध्यापक हैं। रोगी वास्तव में वे हैं। इसलिये इलाज इनका होना चाहिये। इन्हें अपना व्यवहार और दृष्टि-कोण बदलना होगा। यही बच्चों की उलझनों का ठीक हल है।

बच्चों में उलझनें उत्पन्न तो बहुत जल्दी हो जाती हैं, परन्तु निकलती बहुत कठिनाई से हैं। ये उलझनें अज्ञात कारणों से उत्पन्न होती हैं। हमारा उद्देश्य अनुचित नहीं होता वरन् हमारा बच्चों के प्रति व्यवहार अनुचित होता है। अज्ञात रूप से बच्चों के उपचेतन मन पर प्रभाव पड़ते रहते हैं। उन प्रभावों के बाह्य संकेत ही हमारे सामने आते हैं।

मन की गहरी तहों तक पहुँच कर रोग का निदान करना विशेषज्ञों का काम है। इसलिये मनोविज्ञान के विशेषज्ञों की आवश्यकता पड़ती है। परन्तु मनोविज्ञान के कहे जाने वाले सारे विशेषज्ञ वास्तव में विशेषज्ञ नहीं होते। न ही पुस्तकों के अध्ययन से यह ज्ञान आ सकता है। यह अनुभव, अभ्यास और अध्ययन इन तीनों के मिलने से प्राप्त किया जा सकता है। हमारे देश में मनोवैज्ञानिक विशेषज्ञ बहुत कम हैं। जो हैं उन में भी बच्चों के मनोवैज्ञानिक विशेषज्ञ बहुत कम हैं। बच्चों की उलझनों के लिये भारतवर्ष में शायद दो-चार ही क्लिनिक हैं।

भारतीय भाषाओं में इस विषय पर साहित्य लिखा ही नहीं गया।

मां-बाप क्या करें?

अंग्रेजी पढ़े लिखे माँ-बाप को इस विषय पर अच्छा साहित्य मिल सकता है। कुछ चुनी हुई पुस्तकों की सूचि इस पुस्तक के अन्त में दी गई है। वे लोग इन पुस्तकों के अध्ययन से अपना ज्ञान बढ़ा सकते हैं। जो लोग अंग्रेजी पढ़े हुए नहीं हैं उन्हें प्रतीक्षा करनी होगी कि कब राज्य की ओर से या विशेषज्ञों के प्रयत्नों से ऐसा साहित्य प्रकाशित होता है।